रेल रश्मि

अंक : 77, दिसंबर 2018



पूर्वोत्तर रेलवे राजभाषा विभाग की त्रैमासिक पत्रिका



मुख्य संपादक की कलम से....

सर्वप्रथम नव वर्ष पर आप सभी को हार्दिक शुभकामनाएँ!

जीवन का एक–एक पल अत्यधिक मूल्यवान होता है। पल–पल का सदुपयोग करके ही ज्ञान का अखंड भंडार ऋषियों–मुनियों ने खोजा और इस संसार को सुगमता से उपलब्ध कराया। सृष्टि की संरचना के साथ ही काल चक्र का भी निर्धारण कर दिया गया। ग्रहों और उपग्रहों की गति का निर्धारण किया गया। चार युगों की परिकल्पना, वर्ष मासों और विभिन्न तिथियों का निर्धारण काल गणना का ही प्रतिफल है। यह काल कल्पना वैज्ञानिक सत्यों पर आधारित है। मनुष्य ने काल पर अपनी अमिट छाप छोड़ने के उद्देश्य से कालचक्र को नियंत्रित करने का भी प्रयास किया। उसने विक्रम संवत्, शक–संवत्, हिजरी सन्, ईसवी सन् आदि की परिकल्पना की। जैन और बौद्ध मतावलंबियों ने अपने–अपने ढंग से काल गणना के सिद्धांत बनाये। हमारे देश में नव संवत्सर का प्रारंभ विक्रम संवत् के आधार पर चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से स्वीकार किया जाता है और पाश्चात्य दृष्टि से पहली जनवरी को नव वर्ष का शुभारंभ होता है।

नया साल नई उम्मीदें और उत्साह लेकर आता है। लोग नए साल में अच्छी यादें लेकर प्रवेश करते हैं और बुरी यादें पुराने साल में छोड़ आते हैं। इतना ही नहीं अपनी गलत आदतों को त्यागने और अपनी जीवनचर्या में सुधार के संकल्प भी लेते हैं। हम नव वर्ष का स्वागत भारतीय अथवा पाश्चात्य किसी भी दृष्टि से करें, कैसे भी संकल्प लें हमारा उद्देश्य सकारात्मक और परिवार, समाज व राष्ट्र को जोड़ने वाला होना चाहिए। इस विषय पर विचार करें कि जैसा सकारात्मक भाव हम अपने प्रति रखते हैं, क्या हम दूसरों के प्रति भी वैसा ही सकारात्मक भाव रख पाते हैं?

'रेल रश्मि' पत्रिका भी नए वर्ष में सकारात्मकता के भाव के साथ अपने उत्साही और प्रतिभावान रचनाकारों के प्रति आभार प्रकट करती है। उनके रचनात्मक सहयोग से ही इस अंक में साहित्यिक, तकनीकी व स्वास्थ्य विषयक विविध लेखों को शामिल किया जा सका है। साथ ही, इस अंक में संघ की राजभाषा नीति से संबंधित प्रावधानों का भी समावेश किया गया है।

आशा है यह अंक आप सुधि पाठकों को पसंद आएगा। आपके अमूल्य सुझावों की प्रतीक्षा रहेगी ताकि पत्रिका के स्तर में और भी सुधार लाया जा सके।

एक बार पुनः नव वर्ष की हार्दिक शुभकामनाएँ!

(पुरुषोत्तम दास शर्मा)
मुख्य राजभाषा अधिकारी

रेल रश्मि

त्रैमासिक हिंदी पत्रिका

अंक : 77 दिसंबर, 2018

संरक्षक:

राजीव अग्रवाल

महाप्रबंधक

✪

मुख्य संपादक:

पुरुषोत्तम दास शर्मा

मुख्य राजभाषा अधिकारी

✪

उप मुख्य संपादक:

अम्बरीश प्रकाश पाण्डेय

उप मुख्य राजभाषा अधिकारी

✪

संपादक:

ध्रुव कुमार श्रीवास्तव

राजभाषा अधिकारी

✪

उप संपादक:

अनामिका सिंह

वरिष्ठ अनुवादक

✪

संपादन सहयोग:

संजीव कुमार

कनिष्ठ अनुवादक

पता :

राजभाषा विभाग

मुकाधि कार्यालय परिसर

पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर-273012

टेलीफोन- **62852** एवं **62859** (रेलवे)

0551-2203396

ईमेल- **seniorol9@gmail.com**

इस अंक में

विषय	रचनाकार	पृष्ठ सं.
रेल यात्रियों की अजीबोगरीब आदतें (लेख)	डा. एस. के. सैनी	5
हिरनावती (लोक-कथा)	डा. राजेश हजेला	7
सदैव प्रासंगिक रहेंगे 'अज्ञेय' (साहित्य)	डा.कृष्ण चंद्र लाल	12
लोक संस्कृति की अध्यात्म-भूमि और बाजार की संस्कृति (लेख)	डा. आद्या प्रसाद द्विवेदी	14
अपना-अपना पुजापा (लघु कथा)	सुधीर कुमार चंदन	17
महिलाओं एवं बच्चों की सुरक्षा; शुरूआत घर से (आलेख)	सतविंदर कौर	18
आकलन (कहानी)	दुर्गेश चन्द्र ओझा	19
नियति (कहानी)	सुरभि श्रीवास्तव	21
ज्ञान-प्रसार की प्राचीन परंपरा (लेख)	सुनील कुमार	23
मैथिलीशरण गुप्त और साकेत (लेख)	अनामिका सिंह	25
भारतीय रेल में डीईएमयू का महत्व (तकनीकी)	अनुज कुमार श्रीवास्तव	28
छितौनी-बगहा परियोजना (संस्मरण)	एल.एन. मालवीय	29
दिल ही तो है (स्वास्थ्य)	अजय दूबे	31
गौतम बुद्ध (लेख)	डा.एच.पी.सक्सेना	33
सूरदास के नेत्रों पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव (लेख)	डा.हरिशंकर कुमार सिन्हा	35
खुद पर भरोसा हो तो दुनिया आपकी (लेख)	श्याम बाबू शर्मा	39
कैसे करें आईटीआर ई-फाइलिंग (आलेख)	नागेश्वर नाथ श्रीवास्तव	41
भीम प्रसाद की यथार्थपरक कहानियां और अनूठे निबंध (समीक्षा)	कृष्ण गोपाल श्रीवास्तव	42
कविता, गीत एवं ग़ज़ल		
तरीक़ा बचाव का (कविता)	बी.आर.विप्लवी	43
हिंदी से आज हिंदुस्तान मिलने है चला (कविता)	ए.पी.पाण्डेय	44
दो गजलें	सैयद मुहम्मद असलम	45
ग्लानि (कविता)	दीक्षा	46
शमा बुझने को है (कविता)	घनश्याम आई.काने	46
दो कविताएं	प्रमोद लायटू	47
दो कविताएं	किरन श्रीवास्तव	48
नयी सदी का भूखा (कविता)	रामाश्रय यादव	49
दो गजलें	मुकेश प्रधान	50
परिश्रम (कविता)	संजय प्रसाद	51
राजभाषा संबंधी सांविधानिक उपबंध		52

नि:शुल्क वितरण हेतु

(पत्रिका के अंतर्गत प्रकाशित लेखों में व्यक्त किए गए विचार लेखकों के अपने हैं)

भारत रत्न अटल बिहारी वाजपेयी

(25 दिसंबर 1924-16 अगस्त 2018)



कदम मिलाकर चलना होगा

बाधाएं आती हैं आएं
घिरें प्रलय की घोर घटाएं,
पावों के नीचे अंगारे,
सिर पर बरसें यदि ज्वालाएं,
निज हाथों में हंसते-हंसते,
आग लगाकर जलना होगा।
कदम मिलाकर चलना होगा।

हास्य-रुदन में, तूफानों में,
अगर असंख्यक बलिदानों में,
उद्यानों में, वीरानों में,
अपमानों में, सम्मानों में,
उन्नत मस्तक, उभरा सीना,
पीड़ाओं में पलना होगा।
कदम मिलाकर चलना होगा।

उजियारे में, अंधकार में,
कल कहार में, बीच धार में,
घोर घृणा में, पूत प्यार में,
क्षणिक जीत में, दीर्घ हार में,
जीवन के शत-शत आकर्षक,
अरमानों को ढलना होगा।
कदम मिलाकर चलना होगा।

सम्मुख फैला अगर ध्येय पथ,
प्रगति चिरंतन कैसा इति अब,
सुस्मित हर्षित कैसा श्रम श्लथ,
असफल, सफल समान मनोरथ,
सब कुछ देकर कुछ न मांगते,
पावस बनकर ढलना होगा।
कदम मिलाकर चलना होगा।

कुछ कांटों से सज्जित जीवन,
प्रखर प्यार से वंचित यौवन,
नीरवता से मुखरित मधुबन,
परहित अर्पित अपना तन-मन,
जीवन को शत-शत आहुति में,
जलना होगा, गलना होगा।
कदम मिलाकर चलना होगा।

(....साभार)

◆ लेख ◆

रेल यात्रियों की अजीबोगरीब आदतें

डा. एस. के. सैनी

हम भारतीय वैसे तो बहुत ही सभ्य, मददगार और सफाई पसंद लोग हैं किंतु हमारे में से कुछ ऐसे महान व्यक्तित्व हैं जो अपने घर को तो साफ रखते हैं किंतु कूड़ा पड़ोसी के घर की ओर खिसकाने में परहेज नहीं करते। पड़ोस में स्थित खाली भूखंड तो मानो सभी मकान मालिकों के लिए अपने घर का कूड़ा फेंकने का सर्वोत्तम स्थान बन जाता है।

भारतीय रेल में यात्रा करने वाले यात्री भी कई बार अपनी आदतों का शिकार रेल को बना ही डालते हैं।

जब से रेल परिसर एवं सार्वजनिक स्थलों पर धूम्रपान पर पाबंदी लगाई गई, सिगरेट व बीड़ी के धुएं में कमी आयी है किंतु अपनी आदत के नाते सिगरेट बीड़ी के शौकीन रेल यात्री को जब रेल यात्रा के दौरान तलब लगती है तो वह चलती ट्रेन में दरवाजा खोलकर सिगरेट पीने लगते हैं। जब रोका जाता है तो वे तुरंत सिगरेट फेंक देते हैं और भले मनुष्य की तरह खड़े हो जाते हैं जैसे कभी सिगरेट इनके हाथ में थी ही नहीं। हालांकि उनके मुँह से तंबाकू की बदबूदार तीव्रगंध आ रही होती है।

इसी तरह कुछ रेलयात्री शौचालय का दरवाजा बंद करके धूम्रपान करते हैं और फिर चुपचाप निकल जाते हैं। अगला रेलयात्री यदि उसी शौचालय में घुसता है तो धुंए के वातावरण से घबराकर तुरंत बाहर निकल आता है और सिगरेट प्रेमी रेलयात्री को मोटी-मोटी गालियां मन ही मन देने लगता है। महिलाएं तो बोल भी पड़ती हैं कि रेलयात्रा करने तो निकल पड़ते हैं पर ऐसे लोग रेल को भी अपना घर ही समझ लेते है। वे बिल्कुल भी नहीं सोचते हैं कि मेरे धूम्रपान करने से दूसरे यात्रियों को कितनी असुविधा होगी।

जब से रेल में सफाई वाले ट्रेनों के अंदर तैनात हुए हैं, यात्रीगण सफाई के प्रति और भी लापरवाह देखे गये हैं। एक बार मैं वातानुकूलित शयनयान में यात्रा कर रहा था। मैंने देखा कि सहयात्री ने चिप्स के पैकेट में से चिप्स खाये और पैकेट को सीट के नीचे फेंक दिया। मैंने तुरंत उन्हें रोका तो उनका जवाब था अभी सफाई करने वाला आयेगा ना, उसको भी तो कुछ काम चाहिए। कहने का अर्थ है कि कूड़ा डालते रहो ताकि सफाईकर्मी की नौकरी बनी रहे। उन्हें कूड़ा डालने कूड़ेदान तक जाने में भी कष्ट होता है।

कुछ लोग स्पष्ट निर्देशों के बावजूद भी शौचालय के प्रयोग के बाद फ्लश नहीं चलाते और नजर चुराते हुए निकल जाते हैं। रेल यात्रा एक सामुदायिक जीवन है जिसमें समाज के विभिन्न वर्गों के लोग साथ-साथ यात्रा करते हैं। यात्रा के दौरान उनमें तमीज, तहजीब, स्वच्छता और दूसरों के प्रति सम्मान और बुजुर्गों व बच्चों की देखभाल की उम्मीद की जाती है किंतु कुछ भारतीय रेलयात्री दूसरों के लिए यात्रा कष्टकारी बना डालते हैं।

इसी तरह सामान्य डिब्बे और शयनयान का तो भगवान ही मालिक है। शयनयान में एक परिवार मूँगफलियां खा रहा था और छिलके निर्विकार भाव से फर्श पर फेंकता जा रहा था। उसे कोई लेना-देना नहीं था। दूसरे यात्री उसे देखकर नाक-भौंह सिकोड़ रहे होते हैं। मूँगफली के बिखरे छिलके मुझे अराजकता की निशानी लगते हैं जहाँ पर अनुशासन लुप्त हो जाता है और हर शख्स मनमानी करने को स्वतंत्र होता है।

इसी तरह कुछ रेलयात्री वॉश-बेसिन में पानी इतना तेज चलाते हैं कि आसपास खड़े यात्रियों का भी अनैच्छिक स्नान हो जाता है। कुछ उसमें ऐसे खखारते हैं कि जैसे गले में महीनों से जमा हुई खखार और बलगम को आज निकालकर ही दम लेंगे। उनकी आवाज अगले कोच तक सुनाई देती है।

कई रेलयात्री कोच में आपस में इतनी तीव्र आवाज में बहस करते हैं कि लगता है कि दो समूहों में लड़ाई शुरू हो गयी है। बहस का मुद्दा अधिकतर राजनैतिक गतिविधियां होती है जिसमें कि दो विरोधी पार्टियों के समर्थक गाड़ी में एक ही साथ यात्रा कर रहे होते हैं। खामोश यात्री इस लाईव शो का बिना टिकट आनंद लेते रहते हैं, कोई भी नहीं रोकता। महिलाएं मुस्कराती हुई सुनती रहती हैं। उनके लिए यह कोई नई बात नहीं होती है क्योंकि वे इतनी ही तीव्र आवाज में बच्चों और पतिदेव को वक्त-बेवक्त डांटती रहती हैं।

कई बीमार यात्रीगण कोंच में कारीडोर में आने की अपेक्षा अपनी सीट पर बैठे-बैठे ही जोर से छींक मार देते हैं। वे जरा भी परवाह नहीं करते कि उनके छींकने से दूसरा स्वस्थ व्यक्ति भी बीमार हो सकता है। कई मरीज रात भर खांसते रहते हैं दूसरों को सोने भी नहीं देते। वे नहीं सोचते कि उनके इस तरह के व्यवहार से दूसरे सहयात्री बीमार पड़ सकते हैं और परेशान हुए जा रहे है। वे खांसी की दवा, जुकाम की दवा ले सकते हैं किंतु तहजीब उन्हें कौन समझाए?

एक बार कोच में यात्रा कर रहे पति-पत्नी के बीच में ही मायके पक्ष को लेकर इतनी तीव्र तकरार हुई कि सहयात्रियों को समझाना पड़ा कि भाई साहब, आपका घर नहीं है, यह रेलगाड़ी का कोच है। यहां उत्पात मचाना मना है ज्यादा ही शौक है तो घर जाकर लड़ियेगा। दोनों ही यात्रियों को आखें तरेरकर देखने लगे कि उन्हें लड़ने से क्यों रोका, घर में बच्चों के सामने खुलकर नहीं लड़ पाते थे किंतु आक्रोश बना रहता था सो ट्रेन में यात्रा के दौरान मुद्दा आते ही गुस्सा फूट पड़ा।

हालांकि ट्रेन ने अपने डिब्बों में से घर ले जाने लायक कोई सामान नहीं छोड़ा फिर भी शौचालय का लुढ़कता हुआ स्टील का मग कई लोगों की तीखी नजरों का शिकार हो जाता है। वे चाहते हैं कि वह मग ट्रेन की अपेक्षा उनके घर के शौचालय की शोभा बढ़ाए। वातानुकूलित शयनयान में भी लोगों के छींकने, खांसने व हवा छोड़ने की क्रियाएं चलती रहती हैं। कुछ सज्जन चलते समय छोटे तौलिए को भी अपना समझकर रख लेते हैं जिसका पैसा कोच अटेन्डेन्ट को भरना पड़ता है। कुछ यात्री पर्दे व चादरों से अपने जूतों को चमकाते रहते हैं। अब ऐसे लोगों को क्या कहियेगा? रेलवे सुरक्षा बल ऐसे गैर-जिम्मेदार व बदतमीज रेल यात्रियों का रेल अधिनियम की धारा 145 के तहत चालान नियमित रूप से करता रहता है।

आइए, अब समय आ गया है कि हम स्वयं एक सभ्य समाज का निर्माण करें और अपने आस-पास ऐसी गंदगी न फैलाए जो स्वयं और हमारे पड़ोसियों को किसी भी प्रदूषित और संक्रमित बीमारियों का खतरा न उत्पन्न करें। 'हम स्वच्छ, हमारी रेल स्वच्छ' इस भावना का आदर करते हुए हमें अपनी यात्रा करनी चाहिए। वैसे भी हमारी भारतीय संस्कृति हमें विरासत में यही मंत्र देती है कि 'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।'

मुख्य सुरक्षा आयुक्त/रे.सु.ब.
पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर
संपर्क:9794840701

अष्टम् अनुसूची
(अनुच्छेद 344 (1) और 351)

भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची भारत की भाषाओं से संबंधित है। इस अनुसूची में 22 भारतीय भाषाओं को शामिल किया गया है। इनमें से 14 भाषाओं को संविधान में शामिल किया गया था। सन् 1967 में सिन्धी भाषा को अनुसूची में जोड़ा गया। इसके बाद कोंकणी भाषा, मणिपुरी भाषा और नेपाली भाषा को 1992 में जोड़ा गया। 2004 में बोडो भाषा, डोगरी भाषा, मैथिली भाषा और संथाली भाषा शामिल किए गए-

1.	असमिया	2.	उड़िया	3.	उर्दू
4.	कन्नड़	5.	कश्मीरी	6.	गुजराती
7.	तमिल	8.	तेलुगु	9.	पंजाबी
10.	बंगला	11.	मराठी	12.	मलयालम
13.	संस्कृत	14.	सिन्धी	15.	हिंदी
16.	मणिपुरी	17.	नेपाली	18.	कोंकणी
19.	मैथिली	20.	संथाली	21.	बोडो
22.	डोगरी				

◆ लोक-कथा ◆

हिरनावती

डा. राजेश हजेला

लीला पुरुषोत्तम नटवर नागर भगवान श्रीकृष्ण की पावन जन्मभूमि, रंगभूमि और कर्मभूमि ब्रज क्षेत्र अपने में अनेक लोक-गाथाओं तथा लोक-कथाओं को समाहित किए हुए है। यहां पर कालिन्दी के तटों, रमणीयता से परिपूर्ण वनों-बागों-उद्यानों तथा शस्य-श्यामला भूमि के कण-कण में अनेक लोक-कथाएं बिखरी पड़ी हैं। इन लोक-कथाओं में कहीं हास-परिहास के माध्यम से जीवनोपयोगी संदेश दिया गया है तो कहीं आदर्श जीवन मूल्यों को स्थापित करते हुए महत्वपूर्ण नैतिक शिक्षा प्रदान की गयी है। मदन मोहन का मोहक व्यक्तित्व व कृतित्व ब्रजवासियों के रोम-रोम में बसा हुआ है। ब्रज की लोक-संस्कृति में प्रात:काल की स्वर्णिम वेला से लेकर सुरमई साँझ तक गिरिराज के नाम का उद्घोष गूंजता रहता है। कान्हा का नाम अपने आप में एक ऐसा दिव्य मंत्र है जिसमें संसार की सभी समस्याओं का हल अंतर्निहित है। ब्रज की लोक-कथाओं में जहां एक ओर लोक मानस के अभावग्रस्त जीवन की पीड़ा, व्यथा-कथा और संकट को रेखांकित किया गया है वहीं दूसरी ओर जन मानस की अदम्य इच्छाशक्ति तथा दृढ़ आत्मबल के साथ जीवन से संघर्ष करने की प्रेरणा को भी अभिव्यक्ति प्रदान की गयी है। इन लोक-कथाओं में सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि इनके अंत में बाँके बिहारी की कृपा से अनेक गतिरोधों-अवरोधों से मुक्त तथा ऐश्वर्य-वैभव से युक्त आनंदमय जीवन जीने का रोचक वर्णन किया गया है। जीवन के विभिन्न पहलुओं से जुड़ी अनेक लोक-कथाएं ब्रज क्षेत्र में कही-सुनी जाती हैं। इन लोक-कथाओं में तत्कालीन लोक जीवन की सजीव झाँकी प्रतिबिंबित होती है। इस संदर्भ में ब्रज अंचल में सर्वाधिक प्रचलित तथा विशेष महत्वपूर्ण एक लोक-कथा यहां प्रस्तुत है जो अपने में मुरलीधर की कृपा के फलस्वरूप संकटों से उबर कर प्राप्त होने वाले सुख के सार को समेटे हुए है।

प्राचीन काल में ब्रज क्षेत्र के किसी गांव में एक लकड़हारा रहता था। वह भगवान कृष्ण का परम भक्त था। लकड़हारा गांव के बाहर एक झोपड़ी में परिवार सहित रहता था। उसके परिवार में पत्नी और सात बेटियां थीं। नित्य प्रात:काल उठते ही मुरली मनोहर की आराधना वंदना करने के बाद वह रात के बचे हुए रूखे-सूखे भोजन का स्वल्पाहार करता और कुल्हाड़ी लेकर लकड़ियां काटने के लिए वन में पहुंच जाता। पूरे दिन अथक परिश्रम करने और लकड़ियां बेचने के बाद उसे इतनी आय भी नहीं होती थी कि वह सुखपूर्वक जीवन व्यतीत कर सके। निर्धनता के कारण उनके दिन अत्यंत कष्ट के साथ बीत रहे थे। बस किसी तरह गुजर-बसर हो रही थी।

एक दिन लकड़हारे ने अपनी पत्नी से कहा कि "तुम्हारा बनाया हुआ रूखा-सूखा भोजन खाते-खाते मैं ऊब गया हूँ। किसी दिन पुए बनाओ तो जीभ को कुछ स्वाद की अनुभूति हो।"

लकड़हारे की बात सुन कर उसकी पत्नी ने मुँह बनाते हुए कहा कि "पुओं का स्वाद भूल जाओ। सात-सात छोरियाँ छाती पर मूंग दल रही हैं। पुए बनेंगे तो उन्हीं के लिए पूरे पड़ जायें, तब भी बहुत है। हमारे-तुम्हारे भाग्य में तो रूखी-सूखी रोटी ही लिखी है।"

पत्नी की बात सुन कर लकड़हारे ने कहा कि "ऐसा करो आज आधी रात को उठ कर पुए बना लेना। छोरियाँ सोती रहेंगी और जान ही नहीं पायेंगी।"

पत्नी ने लकड़हारे से सहमति व्यक्त करते हुए हामी भर दी। लकड़हारे और उसकी पत्नी को इस बात की जानकारी नहीं थी कि छोटी पुत्री ने उनकी बातें सुन ली हैं। छोटी बेटी ने तत्काल अपनी बड़ी बहनों को आधी रात में पुए बनाये जाने की गोपनीय योजना की जानकारी दे दी। गोपनीय योजना की जानकारी होते ही सभी बहनों ने मन ही मन में कोई निर्णय ले लिया।

लकड़हारे की पत्नी रात के बारह बजे अपने बिस्तर से उठी तो उसे आटा सानने के लिए परात नहीं दिखाई दी। परात न मिलने पर वह झुँझला कर बोली कि न कहाँ गायब हो गयी है यह मुई परात।

"माँ!माँ! मैं बताऊँ" कहते हुए बड़ी बेटी अपने बिस्तर पर उछल पड़ी।

माँ ने तत्परता दिखाते हुए बड़ी बेटी का मुँह दबा दिया और कहा कि ''चुप-चुप, जोर से मत चिल्ला, तेरी बहनें जाग जायेंगी। मैं पुए बनाने जा रही हूँ, तुझे भी दूंगी।...बता परात कहाँ है?

बड़ी बेटी ने बिस्तर से परात निकाल कर अपनी माँ को पकड़ा दी।

परात मिल जाने के बाद जब उसे आटा नहीं मिला तो वह परेशान होते हुए बोली कि शाम तक आटे की पोटली यहीं रखी थी इस समय न जाने कहाँ गायब हो गयी?

''माँ! माँ! मैं बताऊँ'' कहते हुए दूसरी बेटी उठ कर बैठ गयी।

माँ ने तत्परता दिखाते हुए उसका भी मुँह दबा दिया और कहा कि ''चुप-चुप, धीरे बोल वरना तेरी बाकी बहनें जाग जायेंगी। मैं पुए बनाने जा रही हूँ, तुझे भी दूंगी।...बता आटा कहाँ है?''

दूसरी बेटी ने बिस्तर के नीचे से आटे की पोटली निकाल कर माँ को पकड़ा दी। इसके बाद वह अपनी बड़ी बहन के पास बैठ कर पुए बनने की प्रतीक्षा करने लगी।

माँ को परात व आटा मिलने के बाद जब गुड़ की पोटली नहीं मिली तो वह फिर परेशान हो गयी। गुड़ की पोटली के चक्कर में तीसरी बेटी भी जाग गयी।

माँ ने परात में आटा साना और उसमें गुड़ मिलाया परंतु बहुत ढूंढ़ने पर भी कढ़ाई नहीं मिली। माँ ने गंभीर होकर ठंडी साँस भरते हुए कहा कि इस मरी कढ़ाई को भी आज ही गायब होना था।

'माँ! माँ! मैं बताऊँ'' कहते हुए चौथी बेटी भी जाग गयी।

कलछी ढूंढ़ने के प्रयास में पाँचवी बेटी जाग गयी और गायब तेल की शीशी का पता बताने के लिए छठी बेटी भी उठ कर बैठ गयी। एक ही पंक्ति में बैठी छहों बेटियों को देख कर लकड़हारे का क्रोध सातवें आसमान पर पहुँच गया लेकिन हाथ मलने के सिवाय वह कुछ नहीं कर पा रहा था।

लकड़हारे की पत्नी क्रोध में होते हुए भी शांत थी परंतु चूल्हा जलाने के लिए जब उसे दियासलाई नहीं मिली तो वह तमतमाते हुए उठी। उसने आँखें बंद कर सोने का अभिनय करते हुए सबसे छोटी बेटी को झिंझोड़ते हुए कहा कि ''बता दियासलाई कहाँ छिपा कर रखी है?''

छोटी बेटी उठ बैठी और उसने छिपा कर रखी दियासलाई अपनी माँ को पकड़ा दी। माँ ने पुए बनाये परंतु वे सदैव की तरह सातों बेटियों के पेट में समा गये। लकड़हारे और उसकी पत्नी ने आखिरी पुए को आधा-आधा बाँटा और कुढ़ते हुए ढिबरी बुझा दी।

सातों बेटियाँ तो पेट भर जाने पर चैन से सो गयीं परंतु पति-पत्नी को भूखे पेट नींद नहीं आयी। देर तक करवट बदलने के बाद लकड़हारे ने भुनभुनाते हुए कहा कि ''बस, अब बहुत हो गया। इन सातों छोरियों का अब कोई प्रबंध करना ही पड़ेगा।''

पत्नी ने फुसफुसाते हुए कहा कि ''चुप रहो! कोई जग रही होगी तो सुन लेगी।''

लकड़हारे ने गुर्राते हुए कहा कि ''कोई नहीं सुन लेगी। खा-पीकर सब गहरी नींद में सो रही हैं।''

लकड़हारे और उसकी पत्नी की खुसुर-पुसुर से छोटी बेटी जाग गयी और उनकी बातचीत कान लगा कर सुनने लगी।

लकड़हारा कह रहा था कि ''सुबह होते ही इन सातों छोरियों को निर्जन वन में न छोड़ आया तो मेरा नाम नहीं। अब पानी सिर से ऊपर हो चुका है। इन सातों ने हमारा जीना दूभर कर दिया है।''

लकड़हारे की पत्नी ने उसे शांत करते हुए कहा कि ''जो इच्छा हो वह करना परंतु अभी तो सो जाओ। रात बहुत हो गयी है।''

थोड़ी देर के बाद पूरा परिवार निद्रा देवी के आगोश में समा गया। सुबह होने पर लकड़हारे ने अपना संकल्प पूरा करने के लिए सातों बेटियों को बुलाया और स्वर में मिश्री घोलते हुए कहा कि ''तुम लोग बहुत दिन से कहीं घूमने नहीं गयी हो। जल्दी से तैयार हो जाओ। आज हम लोग जंगल में पहुँच कर सारा दिन वहीं व्यतीत करेंगे।''

लकड़हारे ने अपनी पत्नी से दोपहर के भोजन के लिए पूरियां बना देने को कहा तो बेटियों की प्रसन्नता का पारावार नहीं रहा। बड़ी छहों बेटियां वन-बिहार को जाने के लिए तैयार होने लगीं परंतु सबसे छोटी बेटी न जाने कहां गायब थी। छोटी बेटी बिना किसी को बताये पास में बहने वाली नदी के किनारे गयी और वहां पड़े पत्थरों के ढेर से छोट-छोटे सफेद पत्थर

बटोर लायी तथा उन्हें एक थैली में रख लिया। थोड़ी देर बाद जब सातों बेटियां वन-विहार करने के लिए घर से निकलीं तो सबसे छोटी बेटी हाथ में सफेद पत्थरों की थैली लेकर सबके पीछे-पीछे चलने लगी।

घने वन में पहुँच कर बेटियों की प्रसन्नता का ठिकाना नहीं रहा। वे तो खुशी से पागल हो गयीं। पक्षियों का कलरव सुनकर और हरे-भरे वृक्षों तथा अनेक प्रकार की प्रजातियों के जीव-जन्तुओं का अवलोकन कर उनका रोम-रोम पुलकित हो उठा। कभी वे नर्म हरी घास पर दौड़ते खरगोशों के पीछे भागतीं, कभी पेड़ों की डालों पर बैठ बंदरों को मुँह चिढ़ातीं और कभी वृक्षों की नीचे झुकी शाखाओं पर बैठकर कुहू-कुहू करती कोयलों के साथ स्वर में स्वर मिलातीं। दोपहर में सबने एक साथ बैठकर भोजन किया। लकड़हारा थोड़ी देर आराम करने के बहाने एक घने वृक्ष की छाया में लेट गया। सातों बेटियाँ छुपा-छुपाई का खेल खेलने लगीं। खेलते-खेलते थक जाने पर जब उन्होंने अपने पिता को ढूंढा तो वे उन्हें कहीं नहीं मिले। बड़ी बेटियाँ बियावान वन में अकेली रह जाने पर डर गयीं फफक-फफक कर रोने लगीं। छोटी बेटी ने उन्हें ढाढ़स बंधाते हुए कहा कि ''रोना बंद करो और घर चलने के बारे में सोचो।''

बड़ी बेटी ने कहा कि ''बापू न जाने कहा चले गये हैं? अब हम लोग घर कैसे पहुँचेंगे? हमें तो यह भी नहीं पता कि घर का रास्ता किधर से है?''

छोटी बेटी ने कहा कि ''बापू हमें जंगल में छोड़कर घर लौट गये हैं। यह बात उन्होंने रात में ही माँ को बता दी थी।''

बड़ी बेटी यह सुनकर बुरी तरह घबरा गयी और छोटी बेटी से बोली कि ''तुमने हमें यह बात पहले क्यों नहीं बतायी? अब न जाने क्या होगा?''

छोटी बेटी ने बड़ी बेटियों को दिलासा देते हुए कहा कि ''परेशान मत हो। मैंने पहले से ही घर तक पहुँचने का उपाय कर रखा है। मैं घर से लेकर यहाँ तक सफेद पत्थर फेंकती आयी हूँ। उन्हीं पत्थरों के सहारे हम लोग वापस घर तक पहुँच जायेंगे। छोटी बेटी ने जैसा सोचा था वैसा ही हुआ। थोड़ी ही देर बाद सूर्यास्त हो गया और चंद्रोदय होने लगा। चंद्रमा की धवल चंद्रिका में वे सफेद पत्थर चमकने लगे। उन पत्थरों की सहायता से सातों बेटियाँ अपने घर पहुँच गयीं।

लकड़हारा सातों बेटियों को घर आया देखकर मन ही मन भुनभुनाया और उसने सौगंध ली कि अब किसी दिन अचानक ही इन्हें निर्जन वन में ले जाऊँगा। तब देखता हूँ कि ये कैसे वापस घर लौटती हैं?

लकड़हारे ने वास्तव में कुछ दिनों के बाद सातों बेटियों से अचानक ही यह कहा कि ''तुम सब इसी समय मेरे साथ जंगल घूमने के लिए चलो।'' उसने उस दिन अपनी पत्नी से भी दोपहर के भोजन के लिए पूरियाँ बनाने के लिए नहीं कहा। पत्नी ने उनके खाने के लिए रात का बचा हुआ रूखा-सूखा भोजन बेटियों को बाँध दिया। इसके बाद वह पाषाण हृदय लकड़हारा अपनी सातों बेटियों को घने वन में रोता-कलपता छोड़कर वापस घर लौट आया।

छोटी बेटी ने बड़ी बेटियों को दिलासा देते हुए कहा कि ''भयभीत न हो। आज भी हम लोग वापस घर तक पहुँच जायेंगे।''

बड़ी बेटी ने छोटी बेटी की बात पर शंका व्यक्त करते हुए कहा कि ''आज तो तुम पत्थर भी नहीं चुन सकी हो।''

इस बात पर छोटी बेटी ने हँसते हुए कहा कि ''मैं माँ की दी हुई रोटियों के छोटे-छोटे टुकड़े पूरे रास्ते फेंकते हुए आयी हूँ। उन्हीं रोटियों के टुकड़ों के सहारे हम घर तक पहुँच जायेंगे।''

छोटी बेटी की बात सुनकर बड़ी बेटियों के चेहरे खुशी से खिल गये परंतु आज उनके भाग्य में घर लौटने का सुख नहीं लिखा था। रोटी के वे टुकड़े कहीं दूर तक नजर नहीं आ रहे थे। कोई टुकड़ा कुत्ता उठा ले गया था तो कोई बिल्ली का आहार बन गया था। किसी टुकड़े को बंदर ने खा लिया था तो किसी को चिड़ियों ने ले जाकर अपने चिरौटों को चुंगा दिया था। एकाध बड़ा टुकड़ा किसी गाय या बछड़े के पेट में पहुँच गया था।

रोटी के टुकड़े न दिखायी देने पर छोटी बेटी का चेहरा निस्तेज हो गया। उसने कहा कि ''अब रास्ता पहचानने का कोई उपाय नहीं है। आज हम लोग घने जंगल में बुरी तरह फँस गये हैं। वापस घर लौटने का अब कोई उपाय नहीं है।''

बड़ी बेटी ने कहा कि ''इस घने जंगल में भटकने से कोई फायदा नहीं है। यहाँ से बाहर निकलने का प्रयास करना चाहिए। आस-पास गाँव तो होंगे। हम लोग वहीं रहकर गुजर-बसर कर लेंगे।''

बड़ी बेटी की बात सुनकर पाँचों बेटियों ने उसका

अनुसरण किया और उसके साथ अपने-अपने संभावित गंतव्य की ओर चल दीं परंतु उन्होंने छोटी बेटी को निर्जन वन में अकेला छोड़ दिया। देखते ही देखते वे छोटी बेटी की दृष्टि से ओझल हो गयीं। छोटी बेटी वहीं पर एक पेड़ के नीचे बैठ गयी और मन ही मन गिरधर गोपाल का स्मरण करने लगी।

थोड़ी देर बाद एक हिरन वहाँ से निकला तो पेड़ के नीचे अकेली बैठी सुंदर और भोली-भाली बालिका को देखकर ठिठक गया। वह हिरन कुछ देर तक उस कन्या को देखता रहा फिर वह उसके समीप आकर बैठ गया। कुछ देर बाद एक और हिरन आया और वह भी बालिका के पास आकर बैठ गया। धीरे-धीरे अनेक हिरन-हिरनी आते रहे और उसे घेर कर बैठते गये। वह बालिका चारों ओर से हिरनों से घिर गयी। अब उसे न घने जंगल का भय था, न जंगली जानवरों का और न अकेलेपन की चिंता थी। वह असंख्य हिरनों के बीच सुरक्षित बैठी थी। उसने यह निर्णय ले लिया कि वह यह वन छोड़ कर कहीं नहीं जायेगी और यहीं वन्य-प्राणियों के बीच सुख-चैन से रहेगी। उस अबोध बालिका ने ऐसा ही किया।

छोटी बेटी सभी जीव-जंतुओं की प्यारी और दुलारी हो गयी। बंदर उसके लिए मीठे और स्वादिष्ट फल लाते। चिड़ियाँ आतीं और उसे मनमोहक सुरीले राग सुनातीं। सियार ने उसके लिए अपनी गुफा खाली कर दी। नरभक्षी भयानक जंगल जानवर उसके पास से चुपचाप निकल जाते। अब उसे किसी बात की चिंता नहीं थी। वह मीठे और स्वादिष्ट फल खाकर तथा पास के जलाशय का ठंडा मीठा जल पीकर दिन व्यतीत करने लगी। हिरनों का विशाल समूह उसकी रक्षा के लिए सदैव उसके पास रहता था। वह उस निर्जन वन में निर्भय विचरण करती और प्रसन्न रहती। धीरे-धीरे अनेक वर्ष बीत गये और वह बालिका किशोरावस्था से युवावस्था का रास्ता तय करते हुए रूपसी युवती बन गयी।

एक दिन किसी राज्य का एक राजकुमार उस घने जंगल में शिकार खेलते हुए मार्ग भटक कर उसी जगह आ पहुँचा जहाँ वह रूपाम्बरा रहती थी। राजकुमार ने उस अक्षत यौवना सुंदरी को देखा तो वह उस पर मुग्ध हो गया। राजकुमार ने उस रूपमती से पूछा "तुम्हारा नाम क्या है?" यह प्रश्न सुनकर युवती कुछ नहीं बोली। राजकुमार ने हँसते हुए कहा कि मैं समझ गया। इतने सारे हिरनों से घिरी हुई लड़की का नाम हिरनावती ही हो सकता है। युवती इस बार भी मौन धारण किए रही। राजकुमार ने कुछ क्षण रुक कर कहा कि "हिरनावती मेरे साथ विवाह करोगी?" इस बार युवती ने हौले से सहमति में सिर हिला दिया। नारी सुलभ लज्जा और संकोच के कारण उसके गोरे-गोरे गालों पर लालिमा छा गयी थी।

राजकुमार युवती को लेकर अपनी राजधानी पहुँचा। राजा-रानी ने राजमहल में प्रसन्नता और उल्लास के साथ दोनों का स्वागत किया। राजकुमार ने अपने माता-पिता को संपूर्ण घटनाक्रम से अवगत कराया। समस्त प्रकरण की जानकारी होने पर राजा-रानी ने राजकुमार का युवती के साथ पाणिग्रहण संस्कार संपन्न करवा दिया। हिरनावती इतना ऐश्वर्य-भोग-वैभव प्राप्त करने के बाद भी प्रसन्न नहीं थी। राजकुमार के बार-बार पूछने पर उसने बताया कि "मैं अपनी छहों बहनों से मिलना चाहती हूँ। राजकुमार ने हिरनावती से कहा कि तुम चिंता मत करो। मेरे लिए यह बहुत सरल कार्य है। मैं तुम्हारी बहनों की खोज करवा लूँगा।"

राजकुमार के निर्देश पर राज कर्मचारियों ने वास्तव में छहों बहनें ढूंढ़ निकालीं। सभी बहनें हिरनावती से व आपस में मिल कर बहुत प्रसन्न हुई। छहों बहनों का विवाह हो चुका था और वे अपने-अपने परिवार में सुख-सुविधा से रह रहीं थीं। इसके बाद सभी बहनों ने आपस में परामर्श कर अपने माता-पिता से मिलने का निश्चय किया। हिरनावती ने राजकुमार को सभी बहनों द्वारा लिए गये इस निर्णय से अवगत कराया। राजकुमार ने उनके इस निर्णय पर प्रसन्न होकर शीघ्र ही हिरनावती सहित सभी बहनों के जाने का भी प्रबंध करवा दिया। शाही सवारी और राजकीय व्यवस्था के साथ हिरनावती अपनी सभी बहनों के संग लकड़हारे की झोपड़ी के पास पहुँची। लकड़हारा और उसकी पत्नी अब बूढ़े हो गये थे और अपनी बेटियों की याद में रोते रहते थे। हाथियों, घोड़ों, रथों और सैनिकों का विशाल समूह देखकर वे भय से काँपने लगे। लकड़हारे और उसकी पत्नी को जब यह जानकारी मिली कि शाही रथों पर बैठकर आयीं युवतियाँ उनकी बेटियाँ हैं तो उनकी प्रसन्नता का ठिकाना नहीं रहा। अपनी सातों बेटियों के एक साथ आगमन पर वे खुशी से फूले नहीं समाये। बेटियों से मिलने के बाद भी वे आत्मग्लानि और लज्जा से दोहरे हुए जा रहे थे। उन्हें लग रहा था कि बेटियाँ उनके बारे में पता नहीं क्या सोचती होंगी? हिरनावती ने उन्हें इस स्थिति से उबारते हुए कहा कि "यदि निर्धनता न होती तो आप लोग अपनी बेटियों को घने

जंगल में क्यों छोड़ते? इसलिए आपने कोई अपराध नहीं किया है। दोष आपका नहीं निर्धनता का है।''

हिरनावती अपने माता-पिता को साथ ही राजमहल ले आयी और यथोचित मान-सम्मान के साथ वहीं पर उनके रहने की व्यवस्था कर दी। उसने अपनी बहनों को भी अपने पास बुला लिया और उनके पतियों को राजकीय सेवा में उच्च पदों पर नियुक्त करवा दिया। ऐसा करने से हिरनावती के बहन-बहनोई बहुत प्रसन्न हुए। इतना सब होने पर भी हिरनावती को उसके पहले वाले वास्तविक नाम से किसी ने नहीं पुकारा वह सभी के लिए हिरनावती ही बनी रही।

आज अत्याधुनिक जीवन-शैली की अपरिहार्य व्यस्तताओं में जब मनुष्य मात्र मशीन बन कर रह गया है, भौतिकता की चकाचौंध स्वस्थ जीवन-मूल्यों को निरंतर अंधेरे की ओर धकेलती जा रही है तब आवश्यक है कि आशाओं तथा उमंगों से भरपूर ऐसी लोक-कथाओं को फिर से कहा-सुना जाये जिनके अंतर्निहित प्रभाव से भौतिकता के अंधकार में कहीं खो चुकी आध्यात्मिकता एवं मानवता की किरण पुनः प्रकाशित हो सके और मनुष्य के फिर से मनुष्य होने का मार्ग प्रशस्त हो।

सलाहकार (राजभाषा)
भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण
मोहल्ला-हाता करम खाँ,
फर्रूखाबाद-209625,
उत्तर प्रदेश
संपर्क: 9450205346

राजभाषा कार्यान्वयन समितियों से संबंधित कार्य देखने वाले लिपिकों/संयोजकों के पारिश्रमिक (मानदेय) में वृद्धि

उपर्युक्त विषय पर बोर्ड कार्यालय के 06.05.2009 के पत्र सं. हिंदी/समिति/2009/65/1 के अंतर्गत जारी आदेशों का अधिक्रमण करते हुए, रेल मंत्रालय (रेलवे बोर्ड) द्वारा अपने सामान्य कार्य के अतिरिक्त क्षेत्रीय रेलों के कार्यालयों/स्टेशनों पर स्थित राजभाषा कार्यान्वयन समितियों के लिपिकों/संयोजकों के रूप में कार्य करने वाले रेल कर्मचारियों को देय पारिश्रमिक (मानदेय) की मौजूदा प्रतिमाह 300/-रु. की राशि को बढ़ाकर 600/- रु. प्रतिमाह करने का विनिश्चय किया गया है। संशोधित पारिश्रमिक (मानदेय) की राशि जनवरी, 2019 से लागू होगी।

(प्राधिकार: रेलवे बोर्ड का दि. 27.12.2018 का पत्रांक हिंदी/समिति/2017/41/1)

रेलों पर स्थित हिंदी पुस्तकालयों का कार्य देखने वाले अंशकालिक पुस्तकालयाध्यक्षों के पारिश्रमिक (मानदेय) में वृद्धि

उपर्युक्त विषय पर बोर्ड कार्यालय के 30.04.2009 के पत्र सं. हिंदी/समिति/2009/41/1 के अंतर्गत जारी आदेशों का अधिक्रमण करते हुए, रेल मंत्रालय (रेलवे बोर्ड) द्वारा अपने सामान्य कार्य के अतिरिक्त क्षेत्रीय रेलों के कार्यालयों/स्टेशनों पर स्थित हिंदी पुस्तकालयों का कार्य करने वाले रेल कर्मचारियों को देय पारिश्रमिक (मानदेय) की मौजूदा प्रतिमाह 500/-रु. की राशि को बढ़ाकर 1000/- रु. प्रतिमाह करने का विनिश्चय किया गया है। संशोधित पारिश्रमिक (मानदेय) की राशि जनवरी, 2019 से लागू होगी।

(प्राधिकार: रेलवे बोर्ड का दि. 27.12.2018 का पत्रांक हिंदी/समिति/2017/41/1)

सदैव प्रासंगिक रहेंगे 'अज्ञेय'

डा. कृष्ण चंद्र लाल

सच्चिदानंद हीरानंद वात्सयायन 'अज्ञेय' एक अध्ययनशील, जिज्ञासु और चिंतन-मनन करनेवाले साहित्यकार हैं जो कहीं भी, किसी वस्तु, घटना अथवा स्थिति-परिस्थिति पर सर्वथा नये कोण से चिंतन और संवाद कर सकते हैं। बात की गहराई में जाकर अज्ञेय उसे एक ऊँचाई पर ले जाकर इस तरह से छोड़ते हैं कि पाठक या श्रोता विस्मय-विमुग्ध हुए बिना नहीं रह सकता, किंतु न तो यह कोई जादूगरी है और न ही किसी तरह की कलाकारी या मदारीगीरी। यह उनके रचना-कर्म की गूढ़ता-गंभीरता और स्वभाव की सहज, किंतु संप्रेषणीय अभिव्यक्ति है।

अज्ञेय अनुभव के सहज संप्रेषण के ही विश्वासी हैं। उनकी मान्यता रही कि 'कृतिकार का उद्देश्य अथवा लक्ष्य अनुभव का संप्रेषण मात्र है। सहज बोध द्वारा अपनी अनुभूतियों का व्यापकता में प्रवेश, उन अनुभवों पर गहरी पकड़ और उनका सहज संप्रेषण-यही उसका लक्ष्य है।' कहना न होगा कि अज्ञेय ने अपने साहित्य-सृजन से इस लक्ष्य को पूरा करने के लिए सतत कठोर साधना की है। इसी साधना की वजह से उनका साहित्य-सृजन उत्कृष्ट बन सका। अज्ञेय का समग्र निबंध-साहित्य उनकी कठोर साधना का अच्छा उदाहरण है। अपने निबंधों के विषय के साथ गहरा तादात्म्य और प्रभावशाली अभिव्यक्ति का जैसा उदाहरण अज्ञेय ने प्रस्तुत किया, वह विरल है।

अज्ञेय की निबंध-कला उनके व्यक्तित्व की तरह ही रोचक और आकर्षक है। वह निबंध-लेखन की रुढ़ि से मुक्त सर्वथा स्वाधीन चेतना से संबंधित मौलिक सृजन की प्रतिभा के धनी हैं। उनके निबंधों की शैली भी एक जैसी नहीं है, उनमें पर्याप्त विविधता है। अपने निबंध की शुरूआत अज्ञेय कहीं से भी, किसी भी तरह से कर सकते हैं। जो किसी बातचीत का हवाला देकर अथवा किसी भिन्न विषय की चर्चा करके मूल विषय पर आते हुए एक विरोधाभाष पैदा करके अपना निबंध शुरू करते हैं और धीरे-धीरे पाठक को विषय की गहराई में ले जाकर उसकी बोध-वृत्ति का विस्तार करते हैं।

'कला का स्वभाव और उद्देश्य' नामक निबंध की शुरूआत अज्ञेय अपने एक मित्र की बातचीत से करते हैं। 'रूढ़ि और मौलिकता' की शुरूआत वह टी.एस. इलियट की पंक्तियों को उद्धृत करके करते हैं। 'परिस्थिति और निबंधकार' की शुरूआत के लिए एक फ्रांसीसी मित्र की हिंदी साहित्य विषयक इस टिप्पणी का उल्लेख करते हैं-'देखा है तुम्हारा हिंदी साहित्य। नब्बे फीसदी हिंदी लेखक अपनी प्रेमिका अथवा पत्नी की कहानियां लिखते हैं।'

अज्ञेय का निबंध 'मेरी पहली कविता' की शुरूआत 'फिरकी' जैसे खिलौने की चर्चा से होती है। ध्यान देने की बात यह है कि यह निबंध-लेखन वह किसी चमत्कार के लिए नहीं, बल्कि विषय को और ज्यादा गंभीर स्पष्ट एवं व्यापक बनाने के लिए करते हैं। वर्णित विषय में वह कैसे उत्तरोत्तर डूबते चले जाते हैं, नये-नये अर्थ की खोज करते हैं, कैसे एक महत्वपूर्ण विचार-दीप्ति से आलोकित हो जाते हैं, इसके लिए उनका निबंध 'मेरी पहली कविता' अवश्य पढ़ा जाना चाहिए।

निश्चय ही चिंतन-मनन और मंथन की एक उदात्त शैली उनकी इन पंक्तियों में देखी जा सकती है- 'एक खिलौना होता है जिसे फिरकी, फिरकना अथवा 'भंवरी' कहते हैं। यह लट्टू की ही प्रजाति का होता है। अंतर बस इतना कि लटटू लत्ती लपेटकर घुमाया जाता है जबकि 'फिरकी' या 'भंवरी' चुटकी से। इसे पंजाब में 'भूमीरी' या 'भुमिरी' भी कहते हैं। भंवरी की तरह ये शब्द भी 'भ्रम' धातु से निकले हैं।

इसके बाद अज्ञेय पाठक को 'भूमीरी' की गति तक ले जाते हैं, फिर ताली पीटकर कहते हैं-'नाचत है भुमिरी।'..... इसके आगे लिखते हैं-'तब मैंने जाना कि मेरी भंवरी ही नहीं, यह भूमि भी नाचती है। यही नहीं, यह सारा ब्रह्मांड नाच रहा है। मैंने तो एक साधारण वाक्य से असाधारण अर्थ निकाल लिया है। निश्चय ही मैं एक आविष्कारक हूँ-स्रष्टा भी हूँ।' अज्ञेय साधारण से भी असाधारण की प्रतीति कराने में सुदक्ष हैं।

अज्ञेय की विशेषता यह है कि वह किसी भी विषय को उसके मूल से उठाते हैं, उसकी ऊंचाई-गहराई को थाहते-नापते हैं और फिर उसकी व्यापकता को रेखांकित करते हुए प्रतिपाद्य को पूरे विश्वास के साथ व्यक्त करते हुए अपने साथ पाठक की

आश्वस्ति भी लेते चलते हैं। उनके निबंधों में इससे संवादात्मकता उत्पन्न होती है और यह भी कि उनकी बात पाठक तक बखूबी पहुंच रही है। वह पाठक को समानधर्मा बना लेते हैं। यह भी अज्ञेय की निबंध-कला की एक ऐसी विशेषता है जो पाठक को उनके निबंधों बल्कि पूरे साहित्य का सहचर बना देता है। अज्ञेय के आत्मव्यंजक और ललित निबंधों में यह कला अपने चरम पर दिखाई देती है।

अज्ञेय अपने निबंधों में विषयांतर भी करते रहते हैं। कभी-कभी इधर-उधर भटकते हैं, किंतु शीघ्र ही खेद प्रकाश के साथ आ जाते हैं मूल विषय पर। यह भी उनकी एक कला है जो इस बात की द्योतक है कि उसका अनुभव, ज्ञान, बोध, स्मृति सब बहुत ही व्यापक, वैविध्यपूर्ण और अपरिमित है। कब कहां, ले जाकर पाठक को वह पहुंचा देंगे-भूमि पर या आसमान में, देश में कि विदेश में, साहित्य, धर्म, दर्शन, कला-विज्ञान जाने किस-किस क्षेत्र में-कहा नहीं जा सकता।

अज्ञेय के बहुरंगी जीवनानुभव और गहन अध्ययन ने उनकी बोध-वृत्ति का विस्तार किया है। अभिव्यक्ति प्राणवान हुई है जिसमें है पर्याप्त नवीनता और मौलिकता। 'गिलहरी' निबंध में जिस तरह के गंभीर चिंतन का परिचय उन्होंने दिया है, वह उनकी सोच का अच्छा उदाहरण है। कुछ पंक्तियां, तो इतनी गंभीर हो गयी है कि लगता ही नहीं कि वह गिलहरी के बारे में लिखी गयी हैं-'गुणी से गुण की उद्भावना करने की युक्ति तर्क की, कार्य-कारण की परंपरा को समझकर कार्य का कार्यत्व और कारक का कारणत्व पहचानने की और संबंधत्व देखने की क्षमता मानवीय बुद्धि की विशेषता है। मान व बुद्धिमान है, इसीलिए वह नैतिक है।'

अज्ञेय के निबंधों में ऐसे-ऐसे विचार और सच अनुस्यूत रहते हैं कि उन्हें पकड़ पाना कभी-कभी पाठक के लिए मुश्किल हो जाता है। प्रसंग गर्भत्व उनके निबंधों में कभी-कभी ऐसा रहता है कि उसे जाने बिना उनके विचार या मंतव्य को समझना सुगम नहीं रहता।

ऐसा नहीं है कि अज्ञेय सदा गूढ़ता और गंभीरता के सागर में ही गोते लगाते रहते हैं। कभी-कभी तट पर बैठकर हंसते-खिलखिलाते, व्यंग्य करते और मुस्कराते भी उनको देखा जा सकता है। व्यंग्य-विनोद उनके स्मित हास्य का हिस्सा हैं। गंभीर विषयों में भी उनकी यह वृत्ति सक्रियता के साथ मिलती है। प्रतिपक्षी को भी वह अपने व्यंग्य से घायल और कायल करते चलते हैं।

यही पर 'अज्ञेय' के निबंध 'प्रासंगिकता की प्रासंगिकता' की चर्चा आवश्यक है, उपसंहार में वह लिखते हैं-जिस देहरी पर हम हैं, उसके पार प्रश्न हैं, संदेह हैं, प्रलोभन हैं, आश्वासन हैं। सबके बीच और सबसे ऊपर जो अविस्मरणीय बात है, वह यह कि हम स्वाधीन हैं। मूल्यों के स्रोत हैं हम, सृजन में सक्षम। इससे बड़ी प्रासंगिकता नहीं हो सकती कि हम पहचानते रहें कि वह क्या है जिसे हम सृजित कर रहे हैं। हम ऐसा क्या रच सकते हैं जो हमसे भी बड़ा हो। इतना बड़ा कि उसके स्पर्श मात्र से हम हो जायें धन्य।

कहना न होगा कि अज्ञेय का समग्र साहित्य ही मानवीय मूल्यों की खोज और सत्यं-शिवं-सुंदरम् की प्रतिष्ठा का साहित्य है। वह साहित्य है स्वाधीन चेतना का। जब तक मानव जीवन में मूल्य निष्ठा, मूल्य निर्माण की क्षमता और स्वाधीन जीवन जीने की आकांक्षा शेष रहेगी, अज्ञेय का साहित्य उसे बल प्रदान करते हुए प्रासंगिक बना रहेगा।...अपने सहृदय पाठकों को याद आते रहेंगे अज्ञेय!

भूतपूर्व विभागाध्यक्ष (हिंदी)
डी-55, सूरजकुंड कालोनी
गोरखपुर-273015
संपर्क:9451958715

मरणोपरांत जीने की है यदि चाह तुझे।
तो सुन बतलाता हूँ सीधी राह तुझे॥
लिख ऐसी कोई चीज कि दुनिया डोल उठे।
या कर ऐसा काम जमाना बोल उठे॥

दिनकर (नए सुभाषित)

◆ लेख ◆

लोक संस्कृति की अध्यात्म-भूमि और बाजार की संस्कृति

डा. आद्या प्रसाद द्विवेदी

लोक भारतीय वाङ्मय का अत्यंत प्राचीन शब्द है। जहाँ तक हमारी दृष्टि जाती है, वह सब लोक है और इसकी संस्कृति का विस्तार लोक संस्कृति को प्रदर्शित करती है। लोक स्मृति को आधार बनाकर लोक की विविध विधाओं का अध्ययन किया जाता है, जिसमें लोकगीत, लोकनृत्य, लोकनाट्य, लोकगाथा, लोककला आदि आते हैं। 'लोक' शब्द संस्कृत के लोक दर्शन धातु में घञ् प्रत्यय करने पर निष्पन्न हुआ है। इसका अर्थ देखना होता है, अत: लोक शब्द का अर्थ देखने वाला वह समस्त जन समुदाय है, जो इस कार्य को करता है, वह सभी लोक कहलायेगा। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लोक के संबंध में विचार प्रकट करते हुए लिखा है कि "लोक शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम्य नहीं, बल्कि नगरों और गांवों में फैली हुई समूची जनता है, जिनके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियां नहीं है।"

संस्कृति शब्द का अर्थ है सम्यक् कृति। संस्कार या संस्करण का भावार्थ भी संस्कृति के अंतर्गत आ जाता है। संस्कृति शब्द अपने वर्तमान अर्थ में बहुत पुराना नहीं जान पड़ता है, प्रस्तुत अर्थ में प्रयुक्त बंग्ला शब्द 'कृष्टि' और अंग्रेजी के 'कल्चर' शब्द से 'कल्टीवेशन' का कोई साम्य होना चाहिए। इसी आधार पर सभ्यता और संस्कृति में विभेद भी देखा जा सकता है। जहां संस्कृति आत्मिक संबंध रखती है, वहीं सभ्यता का संबंध बाह्य आचरण से है। विकास और परिवर्तन के साथ ही सभ्यता में भी परिवर्तन हुआ करते हैं। संस्कृति में आकस्मिक परिवर्तन की गुंजाइश नहीं रहती है, फिर भी संस्कृति और सभ्यता दोनों का आधार समाज ही है। लोक संस्कृति विकासशील लोक संस्कार पर आश्रित है और संस्कार परंपरागत होकर भी रूढ़ि का पर्याय नहीं है। वह व्यक्तिगत संस्कार से किंचित भिन्न है जो व्यक्ति की भांति जन्म लेकर मरता नहीं है, अपितु विकसित होता रहता है। वह गतिशील, वृद्धिशील और प्रसार श्रवण है। आनंद उसका स्रोत है और मंगल भावना प्राण। परंतु वह आनंद व्यक्ति मानस का न होकर लोकमानस का होता है। लोककला, साहित्य और संगीत के माध्यम से संस्कृति का जो रूप हमारे सामने आता है उसमें व्यक्ति कहीं नहीं दिखायी देता, न तो संरक्षक रूप में और न स्रष्टा के रूप में। यह विशेषता समाजगत इकाई का द्योतक है।

वैसे तो समाज में लोक संस्कृति और शिष्ट संस्कृति की दो पृथक धारायें दिखाई देती हैं, लेकिन लोक संस्कृति, शिष्ट संस्कृति की सहायक होती है। शिष्ट संस्कृति से अभिप्राय अभिजात वर्ग की संस्कृति से है, जो बौद्धिक विकास के उच्चतम शिखर पर पहुंचा हुआ है, जो अपनी प्रतिभा के कारण समाज में अग्रगण्य और मार्गदर्शक रहा है जिसकी संस्कृति वेद, पुराण, शास्त्र, उपनिषद आदि से प्रेरणा प्राप्त की है। लोक संस्कृति से तात्पर्य जनसाधारण की उस संस्कृति से है, जो प्रेरणा लोक से प्राप्त करती है। इस संस्कृति का स्रोत ग्रामीण परिवेश, रहन-सहन आदि है। किसी देश के धार्मिक अनुष्ठानों तथा क्रिया-कलापों के पूर्ण परिचय के लिए दोनों संस्कृति में परस्पर सहयोग वांछित है। ऋग्वेद शिष्ट संस्कृति तथा अथर्ववेद लोक संस्कृति का परिचायक है। लोक संस्कृति के उच्चारण मात्र से ही जन-जीवन का चित्र, आचार-विचार, विधि निषेध, परंपरा-प्रथा, धार्मिक अनुष्ठान आदि सभी विषय समाहित हैं। लोक संस्कृति आदिमानव की मनोवैज्ञानिक अभिव्यक्ति है।

लोक संस्कृति जीवन के लम्हे-लम्हे, चप्पे-चप्पे और बूंद-बूंद में बिखरी है, जिसे समेट कर उसके भीतर के तन्तुओं को पकड़ने की आवश्यकता है। लोक संस्कृति के निर्माण में एक-एक आदमी की भूमिका होती है। लोक संस्कृति में लोक जीवन सहज होकर बार-बार नये बीज रूप में उगता है। वह स्वत: स्फूर्त हो जाता है। उसमें पशु-पक्षी, प्रकृति, देवी-देवता और मानव जीवन खुलेपन के साथ मिलते हैं। वहां परंपराओं का मौखिक रूपांतरण होता रहता है। लोक जीवन संस्कृति का कुबेर है। यह लोक जीवन निरंतर प्रवहमान नदी की तरह लोक संस्कृति को अनुप्राणित करती रहती है। लोक की संस्कृति जन-जन के श्रम से सिंचित होकर प्रकृति की गोद में पनपती रही है। श्रम की पूजा के साथ ही पारंपरिक प्रेम से युक्त विश्व बंधुत्व की भावना हमारे लोक जीवन का आधार है।

प्रत्येक भू-भाग की अपनी लोक संस्कृति एवं लोक साहित्य होता है। वह लोक जीवन का श्वास-प्रश्वास है। संस्कृति ही लोक का मस्तिष्क होता है। संस्कृति के सौंदर्य और सौरभ में ही लोक जीवन का सौंदर्य और यश अंतर्निहित है। लोक में कर्म के क्षेत्र में जो रचा है, ज्ञान के क्षेत्र में जो सोचा है, उन दोनों के रूप में हमें संस्कृति के दर्शन मिलते हैं। ज्ञान और कर्म दोनों के पारस्परिक प्रकाश की संज्ञा संस्कृति है। साहित्य, कला, नृत्य, गांव, पर्व, आमोद-प्रमोद अनेक रूपों में लोक अपने मानसिक भावों को प्रकट करता है। गांवों और जंगलों में स्वछन्द जल लेने वाले लोकगीतों में, तारों के नीचे विकसित लोक कथाओं में संस्कृति का अमिट भंडार भरा हुआ है जहां से ज्ञान की भरपूर मात्रा प्राप्त होती है।

लोक संस्कृति लोक की संस्कृति है। उसे सेना, सियासत और वैज्ञानिक प्रगति आदि से कोई मतलब नहीं है। वह अपने में सभी को समेट लेती है, गजब की पाचन शक्ति है, लोक संस्कृति में। न जाने कितने बाहरी तत्वों को उसने पचा लिया, लोक संस्कृति का संघर्ष अहिंसक और मौन संघर्ष है जो लोक की आंतरिक शक्ति के बल पर लड़ा जाता है। अपसंस्कृति के समूह विभाजित होते हैं, जबकि लोक संस्कृति एक गांव, नगर अथवा जनपद का होता है। जब लोक इकट्ठा आ जाता है, अपसंस्कृति के समूह अदृश्य हो जाते हैं।

वास्तविकता यह है कि लोक संस्कृति, मौलिक संस्कृति होती है। इसमें इतना अधिक स्थायित्व पाया जाता है कि इनके विभिन्न भागों में किसी प्रकार का परिवर्तन सरलता से नहीं होता है। यद्यपि नगरीकरण, औद्योगिकरण, आधुनिकीकरण तथा अन्य कारणों से लोक संस्कृति में महत्वपूर्ण परिवर्तन हो रहे हैं, तो भी इसकी मौलिकता में विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है। परंपरागत समाजों में आज भी लोक संस्कृति व्यक्तियों की सामान्य संस्कृति के रूप में विद्यमान है। लोक संस्कृति का फलक बहुत व्यापक होता है। इसमें लोक जीवन के संस्कार, आचार-विचार, मान्यतायें, लोकाचार, लोकधर्म, लोकसाहित्य, लोकगीत, लोक त्योहार आदि समस्त लोक संस्कृति के अंग होते हैं। लोक जीवन के सांस्कृतिक पक्ष में लोक संगीत, लोक कथायें, बुझौवल, पहेली, लोकोक्तियां, रीति-रिवाज, पर्व उत्सव, व्रत-पूजन, अनुष्ठान, लोकदेवता, ग्रामदेवता, मेले आदि का समावेश रहता है।

भारतीय संस्कृति जन-जन की संस्कृति है। लोक समूचे जीव-जगत प्रकृति और जीवन का नाम है। समूची भारतीय संस्कृति लोक में ही समाहित है। लोक संस्कृति भारतीय जीवन का आधार है। जन्म से लेकर मृत्यु तक घटित होने वाली सारी प्रथा परंपरा, रीति-रिवाज, संस्कार, गीत, कथा सभी लोक संस्कृति के संवाहक हैं। घर-परिवार, समाज, गांव, शहर, जीवनोपयोगी वस्तुएं, धर्म दर्शन, लोक-परलोक तक की रचना लोक संस्कृति की परिधि से निकली है। देश के हर प्रदेश और क्षेत्र की लोक संस्कृति अपने विविध रूपों में दिखायी देती है, लेकिन इस विभिन्नता में सामंजस्य का सूत्र जुड़ा रहता है।

भारतीय लोक संस्कृति में आत्महित और जगत हित का सुंदर समन्वय ओत-प्रोत दिख पड़ता है। भारतीय लोक संस्कृति के आध्यात्मिक प्रवाह की रक्षा नगर से दूर वन प्रांत, सरितातट और ग्रामों की उपसीमा में रहने वाले संतों ने बड़ी सावधानी से की है। संतकबीर, नानक, रैदास, दादू और मलूक आदि की तपोभूमि इस कथन की सत्यता चरितार्थ करती है। लोक जीवन ने इस संतों से आध्यात्मिक आलोक अधिकाधिक मात्रा में प्राप्त किया है। संतों ने अपनी वाणियों में अपने हृदय का उद्‌गार संचित कर जनता का आध्यात्मिक पथ-प्रदर्शन किया है। भारतीय लोक जीवन का श्रेय भौतिकता नहीं अध्यात्म ही है। इसका अभाव ही समग्र रूप से भारतीय संस्कृति और समाज तथा साहित्य के पतन का मूल कारण है। जब तक जन जीवन में आध्यात्मिकता की ज्योत्स्ना पूर्ण रूप से नहीं उतरती, तब तक समाज उन्नति की ओर संतोषपूर्ण यात्रा नहीं कर सकता है। 20वीं सदी के प्रसिद्ध छायावादी कवि पंत के स्वर में स्वर मिलाकर इस संदर्भ में कहा जा सकता है-

करें आत्म निर्माण लोकगण, आत्मोजल भूमण्डल के हित
बहिरंतर जड़ चेतन वैभव, संस्कृति में कर निखिल समन्वित।

यह भी ध्यातव्य है कि आज बाजार संस्कृति और विशेषकर लोक संस्कृति की जड़ों की गहराई से भयभीत है। इसलिए आज बाजार ने नया षडयंत्र ये रचा कि इन गहरी जड़ों को उखाड़ने के कठिन श्रम के बजाय नई संस्कृति की स्थापना में श्रम और पूंजी लगायी जाए, जिससे समूचा विश्व न सही लेकिन एशियाई देश और विशेष रूप से भारतवर्ष तो एक भाषा, एक संस्कृति जो आधुनिकता के लबादे में दिखाई देगी, चपेट में आ ही जायेंगे। तारीफ की बात तो यह है कि उनको अपने श्रम

में सफलता भी मिलती दिखाई दे रही है। अंग्रेजी का बढ़ता वर्चस्व ज्ञान का बढ़ता वर्चस्व नहीं है, अपितु इसी के बहाने एक प्रकार की अपसंस्कृति का वर्चस्व हो रहा है। छोटे-छोटे होटलों, पर्यटन स्थलों, धार्मिक स्थानों पर छोटी-मोटी चीजें बेचने वाले जिस टूटी-फूटी अंग्रेजी का इस्तेमाल करते हैं, वे परोक्ष रूप से एक भाषा का वर्चस्व स्थापित करते हैं। आजकल के अधिकांश व्यापार से जुड़े हुए लोग, आफिसर तथा बहुत से कर्मचारी भी अंग्रेजी बोलते हैं। यह अंग्रेजी ज्ञान के लिए ज्ञान से नहीं आयी है, बल्कि खुद को आधुनिकता की दौड़ में बिछुड़ने से बचाने के लिए विवश उपक्रम में आयी है। अंतर्राष्ट्रीय बाजार भी यही चाहता है, वह व्यक्ति को ज्ञानी नहीं जानकार ही बनाने आया है। भाषा की मामूली-सी जानकारी से उनके व्यापार को पर्याप्त उपभोक्ता मिल रहे हैं। हम अपनी बोली और भाषा खो रहे हैं तो संस्कृति से अपरिचय स्वाभाविक रूप से हो ही जायेगी।

अंग्रेजों की साम्राज्यवादी इच्छा से इस बाजार की इच्छा ज्यादा घातक है। अंग्रेज हमें लूटने और सभ्य बनाने आये थे और बाजार सुख और खुशी के रंगीन लेकिन भ्रामक सपने लेकर आया है। आज इस बाजार ने जरूरत को इच्छा में बदल दिया है, अब तक औद्योगिक पूंजीवाद मांग से पूर्ति की ओर आता रहा है, लेकिन अब आज का पूंजीवाद और उसका वंशज उपभोक्तावाद पूर्ति से मांग की ओर आ रहा है। वह पूर्ति को ही मांग में बदलने के लिए कटिबद्ध है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों की पूर्ति क्षमता की इच्छा हमारी मांग को निर्धारित कर रही है। हम जो मांग करते हैं, वह नहीं मिलता है, हमें वह दिया जाता है, जो वे देना चाहते हैं। हमारा बाजार मांग का बाजार नहीं बन पाया है, जबकि वह पूर्ति का बाजार बनाया जा रहा है।

प्रश्न यह उठ सकता है कि स्थितियां इतनी जटिल हो चुकी हैं तो इस साम्राज्यवादी इच्छा से आये अन्तर्राष्ट्रीय बाजार की मजबूत पकड़ से बाहर कैसे हों? इसका उत्तर हमें अपनी लोक संस्कृति के आख्यानों में ही मिलेगा। अमीर-गरीब पहले भी थे, जाति समस्या भी थी लेकिन पूंजी को आधार बनाकर इतना बड़ा विभेद कभी नहीं था। हम अभी भी अपने लोक साहित्य से इस बाजार के मकड़जाल से उबर सकते हैं। जहां हमारे संत कबीर ने कहा था-

साईं इतना दीजिए, जामे कुटुंब समाय,
मैं भी भूखा न रहूं, साधु न भूखा जाय।

जरूरतों की इतनी कम इच्छाओं तक जाने के लिए परिश्रम कठिन है, लेकिन अपनी लोक संस्कृति का दामन पकड़कर हम अपने अंदर प्रतिरोध की क्षमता पैदा कर सकते हैं, जिसके बल-बूते बाजार से मुखालफत हो सकती है।

क्या यह चिंता की बात नहीं है कि अब नगरीय जीवन में अपने लोकोत्सवों जैसे-दीपावली, रक्षाबंधन, करवाचौथ आदि के मनाने में आम नागरिक की भूमिका बहुत गौण होकर रह गयी है। अब तो बाजार तय करता है कि आप अपने घर की सजावट किस तरह की करेंगे, आप किस काट के कपड़े पहनेंगे, क्या खायेंगे और अपनी सहज जीवन प्रक्रिया को छोड़कर किन आरोपित तौर-तरीकों को अपनाने के लिए बाध्य होंगे। व्यक्ति के विकास, उसके पारिवारिक सुख और पारस्परिक सद्भाव में वैसे भी बाजार की भला क्या दिलचस्पी हो सकती है, चिंता की बात यही है कि वैयक्तिक सुख और आत्मिक आनंद से भी यदि उसे वंचित कर दिया जाय तो लोकधर्मी उत्सवों का उसके निजी जीवन में क्या महत्व रह जायेगा? यह भी विचारणीय है कि यदि बाजार भी समय रहते अपनी भूमिका पर न सोचा और अपने रुख को ठीक न किया तो स्वयं बाजार भी अपने को कितना बचा पायेगा, यह कहना कठिन है। यह सच है कि परिवर्तन और सृजन की प्रक्रिया में नये विचारों, नई तकनीक और नये नजरिये की अपनी अहमियत है। लेकिन अपनी सांस्कृतिक परंपरा और लोक संवेदना से कटकर हम कुछ भी करने का प्रयास करेंगे तो वह कितना ग्राह्य और गुणकारी साबित होगा, इसका निर्णय तो आने वाले समय में चैतन्य लोक ही तय करेगा और तभी हमारे लोक संस्कृति की रसवती धार सूखने से बच सकेगी।

मालती कुँज
सिद्धार्थ इनक्लेव विस्तार
एच.आई.जी.II 32
तारामंडल, गोरखपुर-273017
संपर्क:9415632538

सदाचार सूर्य की तरह चमक और ऊर्जा देता है।

◆ लघु कथा ◆

अपना-अपना पुजापा

सुधीर कुमार चंदन

पेंशन-भोगी अस्सी वर्षीय श्याम लाल अपने संयुक्त परिवार के चौदह सदस्यों के खान-पान, बिजली, पानी, मेहमानों की आवभगत आदि के मोटे-मोटे खर्चे अपनी दस हजार रुपये की पेंशन से कर रहे हैं।

इस परिवार के तीन विवाहित बेटे अपना-अपना छोटा-सा व्यापार करके अपनी शानोशौकत तथा अन्य निजी खर्चे बड़ी ही आसानी से कर लिया करते हैं।

चूंकि श्याम लाल अपनी पूरी-पूरी पेंशन धनराशि इस परिवार पर खर्च कर देते हैं इसलिए उन बेचारे के पास किसी-किसी महीने में तो अपनी दवा तथा अन्य फुटकर खर्चों के लिए एक नया पैसा न बचता था। ऐसी स्थिति में कोई भी पुत्र अथवा पुत्र-वधू उनसे यह न कहता, ''अरे बाबू जी अपनी पेंशन का एक-एक पैसा हम सब लोगों पर खर्च कर दिया करते हैं मगर आप अपने लिए भी तो कुछ जेब में रखा करें।''

कभी-कभी तो यह नौबत भी आ जाती थी कि उन्हें अपनी जरूरतों के लिए किसी बेटे से दो-चार सौ रुपये उधार भी लेने पड़ते थे, जो कि वह अगले महीने की पेंशन से चुकता कर देते हैं, मगर बेटा यह तक कहना गवारा नहीं समझता, बाबू जी, आप क्यों लौटा रहे हैं उधारी। जब आप अपनी पेंशन हम लोगों पर खुशी-खुशी खर्च कर देते हैं, तो क्या हमारा अपने बाप के प्रति इतना फर्ज भी नहीं बनता फिर भी दिलेर बाप के चेहरे पर न तो एक शिकन ही आती और न ही उनके व्यवहार, कर्तव्य या प्रेम में रत्ती भर भी कटौती होती।

उनका सबसे बड़ा बेटा श्रवण जो नौकरी की खातिर कानपुर में रहता है, आज अपने संयुक्त परिवार के साथ दीपावली मनाने आया है। उसने अपने बाबू जी को फटी बनियान और अंडरवियर पहने देखा, तो वह चुपचाप बाजार से दो-दो जोड़ी अंडरवियर और बनियान लाकर बड़ी श्रद्धा से उनके हाथ में रख दिये। श्याम लाल की आँखों से हर्ष-धार स्पष्ट नजर आ रही थी और उनके हृदय-स्रोत से दुआओं का झरना झर-झर, झर रहा था।

बाबू जी की इस दयनीय दशा पर न तो श्रवण ने ही और न ही श्याम लाल ने कोई टिप्पणी अपने अन्य सदस्यों के सामने पारित की। शायद इसकी असलियत स्वयं बाप-बेटे समझ रहे हैं। सभी पुत्र-वधुओं ने श्याम लाल को दीपावली-पुजापे में दस-दस रुपये, चार-चार पूड़ियां व एक-एक लड्डू देकर उनके चरण स्पर्श करने की एकदम खोखली औपचारिकता पूर्ण कर ली जबकि श्रवण की पत्नी शिवानी ने उन्हें पांच सौ एक रुपया, एक गरम शाल और उनकी मनपसंद मिठाई पुजापे में देते हुये कहा, बाबू जी यह तुच्छ-सा पुजापा स्वीकार करें। इसमें मेरा कुछ नहीं है। आपकी दुआओं का ही मीठा-मीठा फल है जो कि हम लोग इस लायक हैं। तेरा तुझको अर्पण, क्या लागे मेरा?

श्रवण बेचारा यह सब चुप्पी साधे देखता रहा क्योंकि यदि वह जुबान खोलता है, तो रंग में भंग हो जायेगा, दीपावली के जगमन पर्व पर अशांति-अंधकार फैल जायेगी। सोचने लगा श्रवण वाह रे संयुक्त परिवार वाह! आज की इस घोर महंगाई में भी लंबे अरसे से चले आ रहे दस ही रुपये तक का पुजापा देने के चलन में एक रुपये तक की बढ़ोतरी नहीं हुई हैं शायद सभी बहुओं ने दस रुपये से आगे न बढ़ने की संयुक्त सौगंध खायी है उस श्वसुर की खातिर जो अपनी पेंशन का एक-एक पैसा पुजापा मानकर श्रद्धापूर्वक अपने संयुक्त परिवार पर न्यौछावर कर देता है। अरे, अगर 51-51 रुपये भी पुजापे में भेंट कर देती तो क्या कुछ घट जाता। तेरा तुझको अर्पण क्या लागे मेरा की बात तो किसी भी बहू के दिमाग में कौंधी तक न। कौंधती भी कैसे, वे सब तो इसे एक बाप का फर्ज और अपना पूरा-पूरा हक समझ रहे थे। हालांकि श्रवण ने किसी अन्य बात पर उदाहरण देते हुए बहुओं को अप्रत्यक्ष रूप से इशारा भी किया था कि आज इस भीषण महंगाई में भला दस रुपये की औकात ही क्या है, मगर किसी भी बहू की बुद्धि में यह बात नहीं आयी कि यह बात कहां लागू हो सकती है।

इस दूसरी घटना से श्रवण का दिल भर गया। भैयादूज की रस्म अदायगी के बाद वह अपने साथ अपने बाबू जी को कानपुर ले गया। इस परिवार के सदस्यों को अपने बाप, श्वसुर या दादा जी की गैरहाजिरी रत्ती भर भी नहीं खल रही है। खल रही है तो सिर्फ उनकी पेंशन। तभी तो ये खुसुर-फुसुर में कुछ यूं व्यस्त हैं लो, अब उनका एक ही बेटा भोगेगा बाप की पेंशन। क्या चाल चली पति-पत्नी ने।

मगर...मगर यह चाल, चाल न थी क्योंकि कानपुर से अलीगढ़ आकर श्याम लाल ने महीने की पूरी-पूरी पेंशन इसी

संयुक्त परिवार को सौंप दी हर बार की तरह और फिर लौट गये कानपुर। पेंशन सौंपने का उनका काम मासिक कार्यक्रम में सम्मिलित हो चुका है। इतने पर भी स्वार्थ में डूबे इस संयुक्त परिवार के कान पर जूँ भी न रेंगी क्योंकि उनका तो उल्लू सीधा हो ही रहा है। उन्हें तो श्याम लाल की याद महीने की पहली तारीख को ही आती है और वह भी इन सब को अपनी पेंशन ठीक उसी श्रद्धा से सौंप जाते जैसे कि कोई भक्त भगवान को नि:स्वार्थ सौंप देता है-अपना ''पुजापा।''

उधर श्रवण और उनकी धर्मपत्नी मनोरमा अपने वृद्ध बाबू जी की तन-मन-धन से नि:स्वार्थ सेवा सौंप कर मान रहे हैं (तीज-त्योहार की क्या) रोज-रोज का पुजापा।

बाप, अलीगढ़ के संयुक्त परिवार की पुत्र-वधुएं और श्रवण का परिवार तीनों ही पुजापा तो बेशक दे ही रहे हैं, लेकिन अपने-अपने भावों के अनुसार है उनका-**''अपना-अपना पुजापा।''**

चंदन-वाटिका
निकट श्री हनुमान मंदिर
341, मैकनियर रोड, प्रेम नगर,
बरेली-243005 (उ.प्र.)
संपर्क:9997689075

◆ आलेख ◆

महिलाओं एवं बच्चों की सुरक्षा ; शुरूआत घर से

सतविंदर कौर

तमाम सरकारी एवं कानूनी प्रावधानों के बावजूद आज देश में महिलाओं और बच्चों के विरूद्ध हो रहे अपराधों में कहीं कोई कमी होती नजर नहीं आ रही, अलबत्ता ये अपराध दिनों-दिन बढ़ते ही जा रहे हैं।

रोज अखबार के पन्ने बलात्कार, एसिड अटैक, दहेज-प्रथा, जबरन वेश्यावृत्ति, किडनैपिंग, महिलाओं पर पति एवं रिश्तेदारों द्वारा की गई हिंसा, कन्याओं की भ्रूण-हत्या, ऑनर-कीलिंग, बाल विवाह, बाल मजदूरी आदि की खबरों से भरे पड़े मिलते हैं।

आज पितृ-सत्तात्मक सोच के तमाम पैरोकार यौन अपराधों की जिम्मेदारी पीड़ित महिलाओं पर ही डाल कर छद्म नैतिकता का पाठ पढ़ाते हुए अपराधियों के पक्ष में खड़े नजर आ रहे हैं। सामाजिक पतन की स्थिति यहां तक पहुंच चुकी है कि अब दुध-मुंहे बच्चे भी सुरक्षित नहीं हैं।

आज की महिलाएं घरों की लक्ष्मण रेखा लांघ कर तमाम ऐसे क्षेत्रों में अपनी पहचान बना रही हैं जहाँ अब तक पुरुषों का वर्चस्व था जैसे-बैंक, राजनीति, अंतरिक्ष, स्कूल, खेद-कूद, व्यापार, सेना, इंजीनियरिंग, मेडिकल आदि। पहले चुनौतियां घर तक ही सीमित होती थी अब चुनौतियां घर-बाहर दोनों तरफ हैं। औरतें तो आधुनिक समाज के हिसाब से खुद को बदलने में लगी हैं लेकिन ज्यादातर पुरुषों की सोच अभी भी वही रूढ़िवादी सदियों पुरानी है।

महिलाओं और बच्चों के विरूद्ध हो रहे अपराधों पर अब और मूक दर्शक बने रहना पूरे सामाजिक ताने-बाने को ध्वस्त कर देगा।

ज्यों-ज्यों अपराध बढ़ते जा रहे हैं त्यों-त्यों महिलाओं और बच्चों की सुरक्षा को लेकर देश की कानून व्यवस्था पर प्रश्न-चिन्ह उठने लगे हैं, पर क्या महिलाओं और बच्चों की सुरक्षा का संपूर्ण दायित्व हम सरकार पर डाल कर अपनी जिम्मेदारियों से मुक्त हो सकते हैं? प्रत्येक व्यक्ति का यह कर्तव्य बनता है कि वह इन अपराधों के विरूद्ध मुखर हो। आज जरूरत है कि हम महिलाओं के प्रति अपनी रूढ़िवादी सोच को बदलें, एक ऐसी सामाजिक संरचना विकसित करें जिसमें लैंगिक समानता, स्वतंत्रता और बराबरी का भाव हो। कुंठित मानसिकताएं अपराध की जननी होती हैं। हमें सोचना होगा कि जिस देश में औरतें और बच्चे सुरक्षित नहीं उस देश का भविष्य क्या होगा? इस मिथक को तोड़ना होगा कि औरतें मर्दों की गुलाम हैं क्योंकि गुलाम माँ की कोख से कभी आजाद नस्लें पैदा नहीं होती। भविष्य में एक शोषण विहीन एवं समतामूलक समाज की स्थापना के लिये शुरूआत हमें अपने घर से ही करनी होगी, आने वाली पीढ़ियों को शिक्षित कर।

सीनियर सेक्शन इंजीनियर
मिल राईट शॉप
यांत्रिक कारखाना
पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर

◆ कहानी ◆

आकलन

दुर्गेश चन्द्र ओझा

सपना सोच रही थी कि अनुराग तो पूरा 'अनुराग' ही निकला-सिर से लेकर पांव तक प्रेम ही प्रेम। जिसने अपने राग-अनुराग से उसको जीवन की सारी निधियां ही जैसे सौंप दीं। तभी कॉलबेल बजी। सपना ने उठकर द्वार खोला तो देखा कि अनुराग ऑफिस से आ चुका था। उसने सपना को देखते ही चहकते स्वर में पूछा- 'बहुत ही खुश नजर आ रही हो! आखिर, बात क्या है?'

'बात ही कुछ ऐसी है कि सुनोगे तो खुशी से झूमने ही लगोगे!'

'ऐसी बात है तो जल्दी से बता ही डालो!'

'कल सुबह की वैशाली से मेरे अनुपम भइया आ रहे हैं। जाकर तुम्हें उन्हें स्टेशन से ले आना है। उन्हें नाश्ते में हलवा और खाने में राजमा-चावल और कद्दू की सब्जी बहुत पसंद है!'

'मेरी पसंदीदा इमली और पुदीने की चटनी भी जरूर बनाना। उन्हें भी पसंद आयेगी।'

'नहीं, उन्हें तो सिरका और मिर्चे का अचार ज्यादा पसंद है। साथ में दही। आते हुए लेते आना।'

मैं तो आज के सामान के साथ लेता ही आया हूँ संयोग से। तुम्हारी लिस्ट में लिखा था यह सब भी...वैसे क्या तुम्हारे घरवालों ने हमें क्षमा करके अपना लिया है?

अनुराग, मम्मी-पापा नहीं, सिर्फ भइया ही आ रहे हैं। तीन साल होने जा रहे हैं। मुझे अपने परिवार के लोगों की उपेक्षा व तिरस्कार सहते।

आखिर प्रेम-विवाह ही तो किया है। हमने...क्या कोई चोरी-चकारी की है! बालिग होने के नाते अपना बुरा-भला हम खूब बेहतर समझ सकते हैं-कहकर उदास हो उठी थी सपना।

अब इतनी-सी बात को लेकर शाम बेरौनक मत करो। तुम खुश रहती हो तो ज्यादा अच्छी और सुंदर लगती हो। पोछ डालो अपने आंसू-कहकर रुमाल से अनुराग ने पोछ डाले थे सपना की आंख के आंसू। फिर बोला-'मैं तो तैयार हूँ ही, तुम भी तैयार हो तो कहीं बाहर चलते हैं डिनर के लिए।'

सपना तैयार होकर आयी तब तक तो अनुराग दो कप कॉफी तैयार कर चुका था। कॉफी पीते हुए वह अतीत की स्मृतियों में जा पहुंचा था जब सपना से उसकी पहली मुलाकात हुई थी। सभा कक्ष की बैठक में अनुराग ने उसे देखा था और बस देखता ही रह गया था। प्रबंध निदेशक आशीष सहाय के आते ही बैठक शुरू हो गयी। परिचय कराते हुए श्री सहाय ने कहा था-'अनुराग जी, यह हैं सपना विश्वास। इनकी नियुक्ति आपके ही विभाग में हुई है।'

अब तो अनुराग की हो गयी छुट्टी-तभी मीठी से चुटकी ली थी अरुण ने।

बैठक के दौरान हुए प्रथम परिचय के बाद धीरे-धीरे अनुराग समझने लगा था कि सपना रूप-सौंदर्य की ही नहीं, प्रतिभा की भी खूब धनी है। अपनी डायरी में अनुराग सपना के साथ बिताये क्षणों की अनुभूतियों को दर्ज करते-करते फुटकर कविताएं भी करने लगा था। उसे अपने दिन बेहद सुनहले-रूपहले महसूस होने लगे थे। सपना नौकरी में कल्चरल कोटा से आई थी। उसने कई नाटकों में अभिनय भी किया था जिनमें डाक्टर लक्ष्मी नारायण लाल का सबरंग-मोहभंग, कजरी वन, विजय तेंदुलकर का 'खामोश', 'अदालत जारी है' और मोहन राकेश का 'आषाढ़ का एक दिन' में अभिनय के लिये उसे विशेष सराहना मिली थी। तभी एक दिन अनुराग के उम्मीदों के घरौंदो को उजाड़ते हुये उसके तबादले का आदेश आ गया। सपना को पता चला तब उसने कहा था-'क्यों मुँह लटकाये हो? तुम्हारे बिना मैं भी तो नहीं रह पाऊंगी। चलो, शादी करके घर बसा लेते हैं अपन।'

सुनकर अनुराग को लगा जैसे सपना ने गोलघर में चाय-कॉफी पीने जैसा सहज समझ लिया है विवाह को...एक विश्वास और दूसरा माधुर्य...क्या होगा? कैसे होगा? पूछा था-सपना, हम दोनों ने अपने माता-पिता से कुछ पूछा ही नहीं। बिना उनकी इजाजत के भला कैसे घर बस पायेगा हमारा?

उनकी शादी की बात से अनुराग के माता-पिता तो खूब हर्षित हुए। किंतु सपना के माता-पिता अड़ गये। तपन विश्वास ने समझाया-शादी के लिये घर और वर दोनों ही देखे जाते हैं। लड़के के यहां माँ-बाप के अलावा दो बहनें, दो भाई हैं। सिर्फ वह ही एक कमाऊ हाथ है। शेष सब नाकारा...पिता की रेलवे से पेंशन...

किंतु मुझे तो अनुराग से विवाह करना है, उसके

घरवालों से मुझे क्या?-सपना ने कहा था। उसके पिता रेलवे में मामूली क्लर्क रहे...भाई-बहन उसी पर तो आश्रित रहेंगे। मैं कतई इजाजत नहीं दे सकता। लोग भला क्या कहेंगे मुझे। वैसे तुम लोगों ने फैसला कर ही लिया है तो हमसे क्या पूछना। हम आशीर्वाद देने की कोई औपचारिकता भी क्यों निभायें?-तपन ने सपना की माँ के आसुंओं की परवाह भी नहीं की थी। अनुराग व सपना के विवाह में कन्या के यहां से कोई नहीं आया था क्योंकि उसका एक मात्र भाई त्रिवेन्द्रम में कोई ट्रेनिंग लेने गया था। उसका पता सपना को नहीं मालूम था।

तबसे तीन वर्ष जैसे चुटकियों में ही बीत गये थे। अनुराग ने ऐसा कुछ भी नहीं किया जिससे सपना को तनिक भी कष्ट की अनुभूति हो। भाई के आने की खुशी में उसके साथ अनुराग ने भी शानदार डिनर किया। अगले दिन सपना के भाई के आने पर अनुराग ने दोनों को पुरानी यादें साझा करने के लिये यह कहकर तन्हा छोड़ दिया था-आज शाम को ऑफिस में मुझे कुछ जरूरी काम है। आने में देर भी लग सकती है। उम्मीद है आप बुरा नहीं मानेंगे...मैं मानता हूँ कि ईश्वर के हर फैसले पर खुश रहना चाहिये क्योंकि परमेश्वर जो हम सबमें अपने तेज के साथ समान रूप से विद्यमान है। जो हमें अच्छा लगता है वो नहीं बल्कि वह अता करता है जो हमारे लिये अच्छा होता है।

अनुराग शाम को जब ऑफिस से आया तब अनुपम ने सपना की ब्याज स्तुति करते हुये कहा-लो पहले तीन तरह के हलवे खाओ-सूजी, बादाम और गाजर के, फिर देखो सपना ने क्या-क्या पूड़ी और पकवान बना डाले हैं। हम तीन जनों के लिये महज।

आज स्पेशल डे है। एक मार्च हमारी शादी की सालगिरह...सपना ने याद दिलाया तब अनुराग ने जेब से एक नया मोबाइल सेट देते हुये सपना को बता दिया कि उसे भी यह विशेष अवसर याद था।

रात का खाना खा चुकने के बाद सपना ने कहा था अनुपम से-'भइया, अब जरा उस खेल के बारे में बताओ जो तुम कह रहे थे...'

यह खेल नहीं, आंकलन के जरिये आपसी भावनात्मक तादात्मय और साहचर्य की जांच-परख करने का एक विशेष माध्यम है। इसके जरिये नजरिये से हम जान पाते हैं कि हम अपने जीवन साथी अथवा मित्र में किस तरह के गुण-दोष की अपेक्षा रखते हैं।

अनुपम ने दोनों को समझाने के लिये कहा और कहने के साथ ही दोनों को एक फुल स्केप कागज उसने सौंप दिया।

कागज पाते ही सपना ने कहा-आप जान लीजिये भाई कि अनुराग ने अपनी डायरी में मेरी जाने कितनी खूबियां गिना रखी हैं...किंतु हमने एक-दूसरे के अवगुणों के बारे में कुछ सोचा ही नहीं था, सपना बोली।

जीवन और गृहस्थी में ज्यादा मिठास भी अच्छी नहीं होती, कभी-कभी तल्खी और अवगुणों की ओर भी नजर डालना बेहतर होता है। अनुपम ने कहा। उसने चेताया कि दोनों बीस मिनट में एक-दूसरे के दस-दस अवगुण या कमियां लिख डालें। दोनों कागज लेकर देर तक सोचते रहे। सपना ने याद कर-कर के पति के रूप में अनुराग के दस नहीं बारह दोष लिख डाले।

दोनों कागज लेते हुये अनुपम ने कहा आपका समय समाप्त हो गया, बीस मिनट समाप्त हो गये अब लिखना बंद!

तह किए हुए कागज खोलते हुए अनुपम ने कहा कि मैं उस सूची को पहले पढ़ूंगा जिसमें ज्यादा अवगुण गिनाये गये होंगे।

सुन कर सपना ने तालियां बजाते हुये कहा कि उसने तो दस के बजाय बारह अवगुण गिना दिये है अनुराग के। अनुराग भी सस्मित तैयार था अपने अवगुणों को अनुपम के मुख से सुनने के लिये जिन्हें सपना ने गिनाया था। अनुपम, सपना की सूची पढ़ने के बाद जब दूसरे कागज की तह खोल कर देखी, तब उसके मुख से निकला-अरे, इसमें तो दोनों ही तरफ सादा है। अर्थात् कुछ लिखा ही नहीं है इस पर...

सच कहूं भाई मुझे सपना में आज तक कोई भी कमी नजर नहीं आई। फिर क्या कमी और कोर-कसर निकालूं उसमें। यह तो पूर्णत: निर्दोष है। मुझे तनिक भी अच्छा नहीं लगेगा, यदि मेरी किसी बात से सपना को कोई कष्ट पहुंचे। अनुराग के ये शब्द सुनते ही सपना सिसककर फफकते हुये रोने लगी।

अनुराग और अनुपम मिलकर समझाने लगे सपना को। सपना ने कहा-देखा भाई, ऐसा है मेरा यह अनुराग जिसे मैंने वरा है पति के रूप में। मैं तो इस लायक भी नहीं कि इनके प्रेम की बराबरी कर सकूं...तो क्या हुआ अनुराग पति की कमियां ढूंढ़कर आरोप लगाने का अवगुण तो मिल गया न सपना में।

अब बताओ सपना की सजा क्या होगी। अनुपम बोला।

अब कल पकेगी कद्दू की सब्जी, पुदीने व ईमली की चटनी और राजमा-चावल। फिर रात का खाना कल हम तीनों बाहर करेंगे...अनुराग की यह तजबीज सुनकर अनुपम के साथ ही सपना भी झिलमिल आंसुओं की लड़ी के बीच मुस्करा उठी।

वरिष्ठ उप संपादक 'आज'
जगन्नाथपुर, गोरखपुर
संपर्क:9415456003

◆ कहानी ◆

नियति

सुरभि श्रीवास्तव

युविका के नाम से आये पत्र को पढ़ने के बाद उसकी माँ को महसूस हो रहा था कि उन दोनों की प्रेम कथा का जो अंत घटित हुआ, वह नहीं होना चाहिए था। स्नेह के धागे का 'चट्ट' की आवाज के साथ टूटना कदापि उचित न था। कविवर रहीम ने कहा था- 'रहिमन धागा प्रेम का, मत तोड़ो चटकाय, टूटे से फिर ना जुड़े, जुड़े गांठ पड़ जाये।' अभी कुछ दिन पूर्व युविका ने निशीथ पर दबाव डालने के लिए स्पष्ट लिखा था भइया लंदन से आ गये हैं। आने से पहले उन्होंने साफ कर दिया है कि शादी उनकी इन्हीं छुट्टियों के दौरान हो जानी चाहिए।

'यह तो ठीक है, किंतु हम दोनों में कोई भी अब तक सेटल तो हुआ ही नहीं है...' निशीथ ने कहा था। यह समस्या तुम्हारी है। भइया की नहीं। मुझको जो चेतावनी मिली है, वह तुम्हें मैंने बता दी है। अब यदि तुम कुछ नहीं कर सके तो जहां भी भइया और मम्मी कहेंगी, मैं वहीं कर लूंगा शादी। युविका की इस बात को सुनकर निशीथ की पेशानी पर परेशानियों से बल पड़े गये थे। गत पांच महीनों से युविका और वह एक ही हॉस्पिटल में काम कर रहे थे। दोनों का समय जैसे इतने दिनों तेजी से उड़ता महसूस होने लगा था।

विभागाध्यक्ष ने हॉस्पिटल में सबका परिचय कराते हुए इस बात पर प्रसन्नता जतायी थी कि इस बैच के सभी जूनियर रेजीडेंट्स बेहद प्रतिभावान हैं। डॉ. जोरावर की सेकेंड पोजीशन थी तो डा. युविका गोल्ड मेडलिस्ट और डॉ. निशीथ...

जी, मेरी तो चौथी पोजीशन है क्योंकि टॉप की पोजीशन तो वैसे भी हर जगह लड़कियों के लिए सुरक्षित होती है-निशीथ ने खड़े होकर टोका था।

तभी युविका ने खड़ी होकर प्रतिकार किया था- गलत बात है लड़की यदि योग्य हो तब भी यही इल्जाम हर जगह लगाये जाते हैं...आई कैन प्रूव इट, सुनकर तत्क्षण विभागाध्यक्ष ने यह कह कर बात रफा-दफा कर दी-प्लीज डोंट टेक इट सीरियसली डॉक्टर युविका...

उसी रोज कैंटीन में जब वह अपनी एक सहेली के साथ बैठी थी, उसके पास आ पहुंचा था निशीथ। देखते ही बोला था-मुझे तो ध्यान नहीं था कि आप एक लड़की होने के अलावा टॉपर भी है 'आई ऐम सॉरी।'

टॉप मैंने अपनी क्षमता और योग्यता के दम पर किया था। शुरू से टॉप करती आयी हूँ, किंतु हर बार कुछ इसी तरह की बातें सुननी पड़ी है मुझे...फिर भी लगता है कि ओवर रिएक्ट कर गयी मैं। भूल जाइये...उसके स्वर में क्षमा याचना थी।

बात आयी-गयी हो गयी थी। इसके बाद निशीथ की ही बाइक पर युविका का हॉस्पिटल आना-जाना होने लगा था। निशीथ के एक रिश्तेदार नामी चिकित्सक थे। उनके पास दो कारें थीं। उनकी सुविधा भी निशीथ जब-तब उठाया करता। पूरे अधिकार के साथ युविका जब चाहती, निशीथ के साथ कार पर भी घूम लिया करती...किन्तु जब उसने भाई के आने और अपनी शादी के बारे में निशीथ से कहा, तब वह उदास हो गया। सोच भरे शब्दों में पूछ बैठा-तो क्या तुम सचमुच शादी कर लोगी युविका।

'सच नहीं, तो क्या झूठ में भी होती है शादी?'-वह मुस्करा उठी थी।

'किंतु क्या कभी तुमने सोचा कि हम एक अच्छे हमसफर साबित होंगे? वेलेंटाइन डे पर मैं तुम्हें प्रस्ताव देने ही वाला था। क्या तुम मुझसे शादी करने पर सहमत हो युविका?'

'बशर्ते कि भइया के आने तक तुम्हारा शादी वाला मूड इसी तरह से बना रहे!'

'मैं तो इसी समय शादी के लिए तैयार हूँ, किंतु हमारी जॉब अस्थायी है। पता नहीं कि चार महीने बाद क्या हो?'

'यह समस्या तुम्हारी है, मैंने अपनी बात बता दी तुमसे।'

'क्या यह तुम्हारी समस्या नहीं? हम अलग हैं क्या?'

'फिलहाल तो अलग ही हैं! मेरे भइया इतनी दूर से भारत आ रहे हैं सिर्फ मेरे हाथ पीले कराने के इरादे से...कैसे उनको निराश करूँ!'

युविका के इस दृढ़ निश्चयी इरादे से भरपूर वाक्य ने बेहद परेशान कर दिया था निशीथ को। माँ और छोट भाई-बहन के अलावा पत्नी के और आ जाने पर बढ़ने वाली जिम्मेदारी का बोझ उठाने के लिए किसी एक की स्थायी जॉब तो जरूरी थी ही। पिता की तो उन सबके लिए कोई अहमियत ही नहीं थी क्योंकि उन्होंने किसी अन्य स्त्री के साथ घर बसा लिया था। माँ ने ही स्कूल में टीचरी करके तीनों बच्चों को पाला। बेटे ने डॉक्टरी पास की तो बेटी ग्यारहवीं में और तीसरी संतान नौंवी में है।...ऐसा नहीं कि युविका निशीथ की दिक्कतों को नहीं समझती थी, किंतु उसकी भी तो मजबूरियां थीं। पिता की मृत्यु हो जाने के बाद मम्मी सिर्फ उसका घर बसाने के इरादे से रुकी हुई थीं। भइया ने तय कर लिया था कि इस बार युविका की शादी कहीं भी कराके मम्मी को लंदन साथ ले कर ही जायेंगे।

युविका आज भले डॉक्टर हो चुकी है, किंतु माँ के लिए है किसी गुड़िया जैसी ही। खूब समझाया कि वह अब बच्ची नहीं है, बड़ी हो चुकी है, भला-बुरा सब समझती है, किंतु मम्मी नहीं मानती। भइया के आने पर युविका ने जब निशीथ के बारे में बताया, तब वह छूटते ही बोल पड़े-देखो, लड़का मुझे जमा नहीं। उससे मिलना जरूरी है।

युविका ने फोन करके निशीथ को तत्काल आने के लिए जब कहा, तब उसने साफ इंकार कर दिया। बोला-'मेरे उन रिश्तेदार को आज ही शाम की फ्लाइट से अमेरिका जाना है, जहां उनका मेजर आपरेशन होना है। उनके लीवर में कोई कांप्लीकेशन आ गयी है। तुम्हें तो पता ही है कि किडनी भले दो होती है, किंतु लीवर तो एक ही होता है।'

'कुछ ही देर के लिए आ जाओ, भइया से मिल लो...'

'नामुमकीन है मेरे लिए...फिर मैं अमेरिका में अपने लिए कोई जॉब देखकर सेटल होने को ट्राई करूंगा...हमारी फ्लाइट आज शाम की ही है। कई जरूरी सामान भी खरीदना है। सारी तैयारी करनी बाकी पड़ी है...'

सुनकर युविका से भइया ने दो टूक लफ्जों में साफ-साफ कह दिया-मुझे तो शुरू से ही इस लड़के पर एतबार नहीं था। वह तेरे लिए दो मिनट के लिए नहीं आ सका जिसके साथ तुम जिंदगी बिताना चाहती थीं...। ऐसी बहानेबाजियां मैंने खूब देखी है जिंदगी में...

युविका के जीवन पर भइया का बहुत असर था। उनके तर्कों को काट पाना उसके बूते की बात नहीं थी। वह ठीक ही सोच रहे थे कि निशीथ उसके साथ रिश्ते के लिए कभी सीरियस था ही नहीं।...कुछ दिनों के बाद युविका के लिए भइया ने एक अच्छा परिवार खोज ही लिया। पता तो वह लंदन से ही लेकर आये थे। देखे-भाले लड़के के साथ अनहोनी होने की उम्मीद कम रहती है। फिर भाई-बहन-दामाद और मम्मी सभी लंदन में ही रहेंगे। अपने विवाह की सूचना युविका निशीथ तक नहीं पहुंचा सकी थी।

इसी बीच, अमेरिका से भेजा निशीथ का पत्र उनके पड़ोसी राधेश्याम ने रिडाइरेक्ट करके उनके पते पर भेजा था जिसमें युविका के लिए स्नेह नजर आता था। निशीथ ने लिखा था-'अपने रिश्तेदार के मेजर आपरेशन के दौरान अमेरिका के कुछ डॉक्टरों से परिचय हुआ। एक लैब में जॉब आफर मिली तो काम शुरू कर दिया हूँ। अब हमारी शादी के लिए कोई समस्या नहीं रहेगी। जल्दी ही एम.डी भी हो जायेगी...भइया और भाभी को बता देना। तुम्हारा निशीथ।'

युविका की मम्मी ने सोचा कि बेटी के नाम आये पत्र को खोल कर पढ़ना तो उनकी गलती थी ही, किंतु उसे देना दूसरी गलती होगी। युविका शुरू से ही अपने पति के रूप में किसी डॉक्टर को देखना चाहती थी, किंतु अब यदि एक फर्म का सी.ई.ओ. ही पति के रूप में मिला है तो यह उसकी नियति ही तो है...निशीथ का पत्र पाकर वह जरूर अपसेट हो जायेगी। उन्होंने पत्र को फाड़ कर खिड़की से बाहर हवा में उड़ा दिया। तभी पास से एक गीत जगजीत सिंह की आवाज में सुनाई दिया-'वह खत के पुर्जे उड़ा रहा था, हवाओं का रुख दिखा रहा था।...कुछ और भी हो गया नुमायां, मैं अपना लिखा मिटा रहा था।...वो उम्र कम कर रहा था मेरी, मैं साल अपने बढ़ा रहा था।' सुनकर युविका की मम्मी ने खिड़की बंद कर ली, किंतु जगजीत सिंह के गायन की अनुगूंज फिर भी देर तक सुनायी देती रही।

शिक्षिका
द्वारा सत्या निकेतन
सूर्य विहार कालोनी
गोरखपुर-273015(उ.प्र.)

◆ लेख ◆

ज्ञान-प्रसार की प्राचीन परंपरा

सुनील कुमार

ईश्वर जिन पर भी प्रसन्न होते हैं, उन्हें वे अधिक विचारशील, सद्भावना-संपन्न और ज्ञान-परायण बना देते हैं। साथ ही उन्हें बुद्धियोग में संलग्न होने की प्रेरणा भी देते हैं। संसार में सद्ज्ञान का प्रसार करना ही उनका मुख्य कार्य बन जाता है। प्राचीनकाल से लेकर अबतक के समस्त सच्चे ईश्वरभक्त ऋषि आजीवन इसी कार्य में लगे रहे हैं। गुरुकुल चलाने में, सद्ग्रंथों का प्रणयन करने में, यज्ञ आयोजनों में, कथा प्रवचन कहने में, संस्कार और पर्वों की व्यवस्था में संलग्न रहकर वे संसार को ज्ञानवान बनाने के लिए ही प्रयत्न करते रहे हैं। प्रत्येक ईश्वरभक्त को सदा से यही करना पड़ा है। वह चुप बैठ ही नहीं सकता। संसार में अज्ञानग्रस्त प्राणियों को देखकर उसकी अंतरात्मा में करुणा की अजस्र धारा बहे बिना रह ही नहीं सकती।

न हि ज्ञानेन सदृशं प्रवित्रमिह विद्यते।
तत्स्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विंदति।।
श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय-4/श्लोक-38

नि:संदेह इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र अन्य कुछ भी नहीं है। प्रयत्न में संलग्न व्यक्ति समयानुसार उसे सहज ही अपने में पा लेता है।

इस संसार में श्रेष्ठ वस्तुएँ अनेक हैं। एक से बढ़कर एक उत्तम पदार्थ यहाँ विद्यमान हैं। परंतु सबसे श्रेष्ठ, सबसे महत्वपूर्ण, सबसे पवित्र यदि कोई वस्तु है, तो वह ज्ञान है। ज्ञान की इसी विशेषता के कारण नर-पशु को नर-नारायण की समर्थता प्राप्त होती है। यह मंगलमय ज्ञान किसी की कृपा से नहीं मिलता है, अपितु अपनी अभिरुचि और प्रयत्नशीलता से ज्ञान वृद्धि का मार्ग प्रशस्त हो जाता है।

विद्यावान व्यक्ति को विवेकशील बनना पड़ता है। उसकी वृत्ति हंस के समान नीर-क्षीर विवेक की बन जाती है। इस संसार में अगणित प्रकार की विचारधाराएँ विद्यमान हैं। लोग तरह-तरह की गतिविधियों को अपनाए हुए हैं। लोग क्या कहते हैं, क्या सोचते हैं और क्या करते हैं, इससे वह तनिक भी प्रभावित नहीं होता। उसमें विद्या की प्राप्ति के कारण इतना साहस और आत्मबल तो उत्पन्न हो ही जाता है कि सारी दुनिया भले ही एक ओर बनी रहे, पर वह अकेला सत्य मार्ग पर अविचल चट्टान की तरह खड़ा रहेगा। ज्ञान की प्रौढ़ावस्था यही है। सच्चे ज्ञानी का स्तर और आचरण यही होता है कि वह दूसरों से प्रभावित न हो, वरन दूसरों को अपनी सत्यनिष्ठा और विवेकशीलता से प्रभावित करता रहे।

गीताकार का मुख्य उद्देश्य भी यही रहा है कि मानव समाज को ज्ञान की उसी स्तर तक पहुँचाया जाए। भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को इसी स्तर पर उठा ले गए थे। भारतीय समाज को सच्चा ज्ञानी बनाना है। ज्ञानी ही भगवान के सबसे प्रिय हैं। नवनिर्माण की बौद्धिक क्रांति का प्रयोजन यही है कि हर व्यक्ति विवेकवान बने, विवेक को सर्वोपरि माने और जो विवेक-सम्मत हो उसे ही स्वीकार करे।

आज हमारे सामने जो ज्ञान-साधना की देन सुरक्षित है, वह उन्हीं ऋषियों की ज्ञान-साधना की देन है। महर्षि व्यास, वशिष्ठ, भरद्वाज, गौतम, कपिल, जैमिनी, पतंजलि आदि ऋषियों ने न केवल ज्ञान की साधना और खोज की, बल्कि साधारण जीवन व्यतीत कर ज्ञान के प्रसार का भी कार्य किया। महर्षि चरक, सुश्रुत ने आयुर्वेद के क्षेत्र में खोज और अनुसंधान करके मानव समाज को रोगमुक्त और स्वस्थ बनाने की दिशा में महत कार्य किया। देवर्षि नारद स्वयं न केवल एक भक्त और ज्ञानी व्यक्ति थे, वरन उनका ज्ञान-प्रचार और लोगों को सद्प्रेरणाएँ देने का कार्य अत्यंत सराहनीय था। उन्होंने कई गिरे हुओं को उठाया, पापियों को शुभ मार्ग में लगाया। अनेकों को ज्ञान की दीक्षा देकर आत्मविश्वास की ओर अग्रसर किया।

महर्षि कणाद के बारे में प्रसिद्ध है कि वे खेतों में उपेक्षित छोड़ दिए जाने वाले अन्न के दानों को बीनकर उनसे अपने परिवार का जीवन निर्वाह करते थे और अपना अधिकांश समय ज्ञान-साधना में लगाते थे। इसी तरह महर्षि पिप्लाद पीपल वृक्ष के छोटे-छोटे फलों से जीवन निर्वाह किया और अपनी ज्ञान-साधना जारी रखी। शुकदेव जी जन्म से ही ज्ञान की खोज में निकल गए थे। आजीवन त्यागी,

अपरिग्रही रहकर शुकदेव जी ने ही महाराजा परीक्षित को भागवत की कथा सुनाई थी। राजा जनक से जो ज्ञान उन्होंने प्राप्त किया था, उसे संपूर्ण मानव जाति में वितरित किया।

महामनीषी चाणक्य चंद्रगुप्त मौर्य के मंत्री थे। उन्हीं के प्रयत्नों से मौर्य साम्राज्य का विस्तार हुआ, लेकिन यह सब करते हुए भी चाणक्य ने अपने विद्याप्रेम को नहीं छोड़ा था। राजकीय वातावरण से दूर कुटिया में रहकर चाणक्य ज्ञान की साधना करते थे। हालाँकि चंद्रगुप्त ने उनके रहने के लिए अच्छे भवन और सुख-सुविधाओं का साधन उपलब्ध करा दिया था, परंतु उन्होंने उसे ठुकरा कर अपनी कुटिया में सरस्वती की आराधना की। इसी के परिणामस्वरूप अध्ययन और अध्यापन दोनों ही कार्य चाणक्य के जीवन के अभिन्न अंग बने रहे। कौटिल्य का **'अर्थशास्त्र'** नीतिशास्त्र के रूप में चाणक्य की बहुत बड़ी देन है।

जगद्गुरु शंकराचार्य जी ने न केवल तपस्या ही की, वरन ज्ञान की बहुत बड़ी साधना भी की थी। उनके आत्मतेज और विद्वता से सभी परिचित हैं। प्राचीन ग्रंथों का उन्होंने बड़ा सरल और विद्वतापूर्ण भाष्य किया। स्वयं नई रचनाएँ भी कीं। बहुत छोटी सी उम्र में ही उन्होंने समस्त शास्त्रों का अध्ययन पूर्ण कर लिया था।

गोस्वामी तुलसीदास विरचित **'श्रीरामचरितमानस'** विश्व प्रसिद्ध ग्रंथ है जो नीति, धर्म, जीवनशास्त्र संबंधी महत्वपूर्ण शिक्षाओं से भरा पड़ा है। संत कबीर, गुरुनानक, सूर, मीरा, जायसी आदि के पदों में जीवन शिक्षा का बहुत बड़ा सार भरा हुआ है। संत तुलसीदास ने तो घर से निकलने के बाद स्वयं को बहुत समय तक अध्ययन, चिंतन, मनन में लगाया था। सूरदास ने भक्ति भावना से सूखे और नीरस हृदयों को सरस बनाने के लिए **'सूरसागर'** की रचना की। उनके रचित पदों का भक्ति साहित्य में अमूल्य स्थान प्राप्त है।

संत एकनाथ, संत ज्ञानेश्वर, चैतन्य महाप्रभु, समर्थ गुरु रामदास आदि न केवल संत और साधु ही थे वरन परम ज्ञानी, विचारक और विद्वान भी थे। संत एकनाथ ने भागवत की अभूतपूर्व टीका की है। ज्ञानेश्वर की **'ज्ञानेश्वरी गीता'** और संत तुकाराम के **'अभंग'** प्रसिद्ध हैं। चैतन्य महाप्रभु न्याय और धर्म के प्रकांड विद्वान थे। समर्थ गुरुरामदास का **'दासबोध'** आज भी महाराष्ट्र में आदर की दृष्टि से देखा जाता है। इन संतों ने भक्ति के प्रसार के साथ-साथ ज्ञान का भी बहुत प्रसार किया।

भूतपूर्व राजभाषा अधिकारी
241/सी, सरस्वतीपुरम
निकट रामजानकी मंदिर, गोरखपुर
संपर्क: 7754818883



दुःख में सुमिरन सब करे, सुख में करै न कोय।
जो सुख में सुमिरन करे, तो दुःख काहे को होय॥

सात समुंद की मसि करौं, लेखनि सब बनराइ।
धरती सब कागद करौं, हरि गुण लिखा न जाइ॥

माया मरी न मन मरा, मर-मर गए शरीर।
आशा तृष्णा ना मरी, कह गए दास कबीर॥

संत कबीर

◆ लेख ◆

मैथिलीशरण गुप्त और साकेत

अनामिका सिंह

राम, तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है।
कोई कवि बन जाय, सहज संभाव्य है।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त हिंदी साहित्य के इतिहास में खड़ी बोली के प्रथम महत्वपूर्ण कवि हैं। हिंदी के तात्कालिक कवियों में मैथिलीशरण गुप्त का सर्वोत्तम स्थान माना जाता है। अपनी काव्य साधना से उन्होंने हिंदी साहित्य भंडार को लगभग वर्षों का दान दिया और अंत तक कवि निश्चिंत होकर नहीं बैठे। उनकी लेखनी अबाध गति से चलती रही। यह हिंदी के लिए निश्चित रूप से सौभाग्य की बात थी।

भारतीय जीवन का आज भी विश्वास है कि राम और सीता का आदर्श ही हमारे देश को ऊंचा उठा सकता है। इसीलिए राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जी ने अपनी रचना 'साकेत' में एक बार पुन: परंपरागत राम कथा को आधुनिक जीवन के अनुरूप चित्रित किया।

कथा की परंपरागत विशेषताएं होते हुए भी गुप्त जी ने अपने अनुरूप उसे अभिव्यक्ति प्रदान की है। रामचरितमानस अथवा रामायण की भांति उनकी कथा सूर्य-वंश की गाथा-परंपरा अथवा रामजन्म की पौराणिक पृष्ठभूमि से प्रारंभ होकर राम-जीवन की क्रमिक घटनाओं पर गुजरती हुई महात्म्य वर्णन पर जाकर समाप्त नहीं होती। यहां तो कवि ने कुछ मर्मस्थल चुन लिए हैं और उन्हीं को अन्वित करती हुई कथा चलती है।

यह साहित्य की वाटिका फूले-फले, इसकी कामना गुप्त जी ने पहले ही कर ली-

जय देव-मंदिर देहली
सम-भाव से जिस पर चढ़ी-
नृप-हेम-मुद्रा और रंक-वराटिका।
मुनि-सत्य-सौरभ की कली
कवि-कल्पना जिसमें बढ़ी-
फूले-फले साहित्य की वह वाटिका।

साहित्य की इस वाटिका में एक परिवर्तन तो मूल में ही है कि साकेत में मूल कथा राम और रावण की न होकर लक्ष्मण और उर्मिला की हो जाती है पर उसका विकास मूल कथा की पृष्ठभूमि पर होता है।

'साकेत' की कथावस्तु में रामायण के विस्मृत, उपेक्षित तथा त्यक्त प्रसंगों, पात्रों और व्यापारों पर ही अधिक प्रकाश डाला गया है। गुप्त जी ने साकेत में बारह सर्गों में राम के आख्यान को उर्मिला का आख्यान बनाकर चित्रित किया है। 'साकेत' का आरंभ और मध्य तथा अंत किसी भी दृष्टि से 'साकेत' की कथा राम की कथा नहीं बन पाती। डा. नगेन्द्र के अनुसार, 'रामायण का मुख्य कार्य है रावण वध, परंतु 'साकेत' में भी उसी स्थान का अधिकारी नहीं है, यह मानने में आपत्ति नहीं होगी क्योंकि साकेत का रंगस्थल है अयोध्या और उर्मिला विरह ही उसकी सबसे महत्वपूर्ण घटना है।' उस रूप में इस महान लेखक के अनुसार भी साकेत में राम की कथा को प्रधानता नहीं मिल पाई है। लक्ष्मण का वृतांत देते समय राम का वृतांत आना स्वाभाविक है। सारे पात्रों का ध्यान उर्मिला की ओर है। स्वयं कवि कहते हैं-

अरुण-पट पहने हुए आह्लाद में,
कौन यह बाला खड़ी प्रासाद में?
प्रकट-मूर्तिमती उषा ही तो नहीं,
क्रांति की किरणें उजेला कर रहीं।

इतना ही नहीं, उर्मिला की प्रधानता अन्य पात्रों लिए भी है। राम के वनवास पर उर्मिला का भाग्य निर्भर है, अत: इससे भी उर्मिला संबंधित है। उर्मिला का विरह 'साकेत' की सबसे महत्वपूर्ण घटना है। उसकी परिस्थिति की रमणीयता उर्मिला के विरह को और भी करुण बना देती है।

प्रथम सर्ग में उर्मिला के जीवन की मनोहर छटा विद्यमान है। यहां गुप्त जी ने उर्मिला को कुशल नारी के रूप में दिखाया है। संयोग के वाद वियोग का दारुण दु:ख होता है। दशरथ की मूर्छा, सुमित्रा और कौशल्या का वेदनामय चित्र उपस्थित कर कवि लेखनी उर्मिला पर दृष्टिपात करती है। लक्ष्मण उर्मिला को साथ ले चलने से झिझकते हैं क्योंकि प्रभुवर बाधा पावेंगे, छोड़ मुझे भी जावेंगे।

और इसलिए वे उर्मिला से कहते हैं-

रहो रहो हे प्रिय रहो !

और तब बेचारी उर्मिला-

वह भी सब कुछ जान गई, विवश भाव से मान गई।

गुप्तजी ने यहां बिल्कुल उचित चित्रण किया है। एक ने पति की भलाई के लिए जाना स्वीकार किया और दूसरी ने पति की भलाई के लिए रुकना। यही तो विवशता है। तभी वह कहती है-

हे मन! तू प्रिय-पथ का विघ्न न बन।

कवि ने यहां जिस आसक्ति से लक्ष्मण और उर्मिला का चित्र अंकित किया है उसमें राम और सीता के नहीं। उर्मिला का सौंदर्य-वर्णन देखिए-

पद्मरागों से अधर मानो बने, मोतियों से दांत निर्मित हैं घने।

लक्ष्मण और उर्मिला की कला चर्चा का रूप देखिए-

उर्मिला कहने चली कुछ, पर रुकी
और निज अंचल पकड़ कर वह झुकी
भक्ति-सी प्रत्यक्ष भू-लग्ना हुई,
प्रिय कि प्रभु के प्रेम में मग्ना हुई।

'साकेत' का निर्माण तो केवल इन पंक्तियों की सार्थकता के लिए हुआ है। सीता कहती है-

आज भाग्य जो है मेरा, वह भी हुआ न हा तेरा।

तो क्या वास्तव में उर्मिला भाग्यहीन है नहीं, उसका भाग्य तो सीता से भी ऊंचा है, क्योंकि लक्ष्मणजी उसके त्याग के आगे झुकते हैं। लक्ष्मण का इतना मान देना उर्मिला की भाग्यहीनता की निशानी नहीं है। लक्ष्मण कहते हैं-

वन में तनिक तपस्या करके, बनने दो मुझको निज योग्य,
भाभी की भगिनी, तुम मेरे, अर्थ नहीं केवल उपभोग्य।

और राम भी सीता को वन में उपभोग की दृष्टि से नहीं ले गए। उसके माध्यम से उनको राक्षसों का सर्वनाश करना था। सीता-राम के साथ, मांडवी और श्रुतिकीर्ति अपने पतियों के साथ है परंतु उर्मिला नि:संबल है और वियोग ही केवल उपचार है।

उर्मिला की माता ने ठीक ही कहा था- मिला न वन ही गेह ही तुमको। सीता और लक्ष्मण के चले जाने पर वह विचारती है-

मैं क्या करूं! चलूं कि रहूं,
हाय! और क्या आज कहूं!

छठे सर्ग में भी उर्मिला का स्थिति देखिए-

पुरदेवी से यह कौन पड़ी, उर्मिला मूर्च्छिता मौन पड़ी!

किन तीक्ष्ण करों से छिन्न हुई, यह कुमुद्विती जल-भिन्न हुई।

इतना ही नहीं, दशरथ भी उसी को पूछते हैं-

उर्मिला कहां है,
हाय बहू! तू रघुकुल की असहाय बहू!

विरह प्रेम का तप्त स्वर्ण है। वेदना की अग्नि में प्रेम शुद्ध और निर्मल होकर निखर आता है। विरह के कारण में प्रगाढ़ता, स्थिरता आने के साथ प्रतीक्षा और अतृप्ति की उत्सुकता के कारण रसानुभूति की मात्रा और अधिक प्रगाढ़ हो जाती है। विश्व के कवियों ने इसी कारण विरह, वियोग, विप्रलंभ को प्रधानता प्रदान की है-

And love is loveliest when embalmed in tears.

हर हृदय में एक विरहिणी नारी बैठी है जो अपने दुख का गीत सुनाया करती है। डा. नगेन्द्र कहते हैं कि यह विरहिणी अजर-अमर है और सभी कवियों की आत्मा में इसका निवास है। यह विरहिणी कालिदास के हृदय में शकुंतला, भवभूति की सीता, जायसी की आत्मा में नागमती, सूर के अंतस में राधा तथा मीरा के प्राणों में अरूप होकर रोई है। गुप्तजी के हृदय में वही उर्मिला बन गई है।

प्रियप्रवास के समय चिंता, दु:ख, मोह, काम, आशंका, निरवलम्बिता और एकाकीपन न जाने कितने ही भाव उत्पन्न होते हैं। उर्मिला हृदय को नियंत्रित-सा कर कहती है-

.....हे मन,
तू प्रिय-पथ का विघ्न न बन।

सीता-राम को अपने तर्क द्वारा परास्त कर-

अथवा कुछ भी न हो वहां, तुम तो हो जो नहीं यहां।
मेरी यही महामति है, पति ही पत्नी की गति है।

उर्मिला चुप है। वह संकोच से कुछ न कहकर हाय ही कहकर धड़ाम से गिर पड़ती है। लक्ष्मण नेत्र बंद कर लेते हैं, सीता भयभीत हो दु:ख से व्यजन डुलाती कहती है-

आज भाग्य जो है मेरा, वह भी हुआ न हा तेरा।

और सभी व्यग्र हो उठते हैं।

कवि ने उर्मिला के गौरव को बढ़ाने के लिए सीता के उपर्युक्त कथन पर भी ईर्ष्या नहीं दिखाई।

नवयौवना उर्मिला वियोग में जलकर कितनी कृश हो जाती है-

मुख-कांति पड़ी पीली-पीली, आंखें अशांत नीली-नीली,
क्या हाय यही वह कृशकाया, या उसकी शेष सूक्ष्म छाया।

सखियों से राम-लक्ष्मण के वापस आने के आश्वासन

पर वह विषादमयी मुस्कान की रेखा मुख पर लिए कह उठती है- सब गया, हाय आशा गई ।

कितना निराशपूर्ण भाव है इन शब्दों में प्रेमी की वियोग-व्यथा का विचार कर विरह द्विगुणित हो जाता है। उर्मिला कहती है- करना न सोच मेरा इससे।

चित्रकूट पर सीता के कौशल से उर्मिला-लक्ष्मण मिलते हैं। लक्ष्मण उर्मिला की कृश काया देख उसकी छाया के समान अनुभव कर चकित रह जाते हैं तब उर्मिला उनकी संकोच-मिश्रित अवस्था को देख कह उठती है-

मेरे उपवन के हरिण आज वनचारी,
मैं बांध न लूंगी तुम्हें, तजो भय भारी।

और वह उर्मिला के उपवन का हरिण लक्ष्मण यह सुनते ही,

गिर पड़े दौड़ सौमित्रि प्रिय-पद-तल में,
वह भीग उठी प्रिय चरण धरे खग-जल में।

लक्ष्मण उर्मिला के साथ हुए अन्याय को जानते हैं और उसकी उदारता को देख वे दु:ख से भीग उठते हैं। उर्मिला ने न जाने प्रिय से कहने को कितनी बातें सोची थीं, परन्तु वह निश्छल और हृदय में तूफान दबाए इतना ही कहती है-

हा स्वामी, कहना था क्या-क्या,
कह न सकी, कर्मों का दोष ।
पर जिसमें संतोष तुम्हें हो, मुझे उसी में है संतोष ।।

उर्मिला का चरित्र और भी चमक उठता है। एक भारतीय नारी का महान आदर्श आंखों के सामने नाच उठता है। चौदह वर्ष की लंबी अवधि सामने है-

अवधि-शिला का था उर पर गुरू भार ।

उर्मिला में स्वाभाविकता मर्यादा से परे नहीं है-

मानस-मंदिर में सती, पति की प्रतिमा थाप।
जलती-सी उस विरह में, बनी आरती आप।।

वह स्वयं ही अपनी आग में जलकर प्रसन्न है। किसी अन्य को तप्त नहीं करना चाहती-

जा, मलयानिल, लौट जा, यहाँ अवधि का शाप।
लगे न लू होकर कहीं, तू अपने को आप।।

उर्मिला के विरह में एक स्वाभाविकता है। वह बिहारी की नायिका की भांति घर में प्रलय नहीं लाती, इतर की शीशी नहीं सुखा देती, न ही हवा से उड़ती है और न नागमती की भांति जंगलों में घूमती है। उर्मिला का विरह जीवन से बाहर की वस्तु न होकर एक कुल-ललना की भांति दिनचर्या में ही विरह का समावेश है। वह घर में ही छटपटा रही है, नित्य प्रति के कर्म भी बंधे हुए हैं, खाना-पीना, स्नान-संध्या, सेवा-सुश्रूषा पालित पक्षियों की चिंता सभी है। जीवन जड़ हो गया है। चौदह वर्ष की दीर्घ अवधि है। समय काटे नहीं कटता। रोना मात्र ही भीगे आंचल सहित उर्मिला के पास है। वह सखी के खाना खाने के लिए कहने पर कहती है-

कहे जो, मानूं सो, किस विधा बता धीरज करूं।
अरी, कैसे भी तो पकड़ प्रिय के पद मरूं।।

कितनी व्यथा है। केवल एक बार प्रिय के पैर पकड़ना चाहती है वह।

दु:ख को कम करने के लिए सखी कहती है-

प्रोषित-पतिकाएं हों,
जितनी भी सखि, उन्हें निमंत्रण दे आ।

वह चित्र-रचना तथा अन्य काम भी इसी कारण करती है। तोते के हाय रूठो न रानी, कहने पर वह उसके आचार्य (लक्ष्मण) के संबंध में पूछती है। वह उत्तर देता है, 'मृगया में' और उर्मिला कितने मार्मिक शब्द कहती है-

सचमुच मृगया में? तो अहेरी नये वे,
यह हत हरिणी क्यों छोड़ यों ही गये वे।

दिन बीतने पर रात आती है और विरहिणी कह उठती है-

दीपक के जलने में आली,
फिर भी है जीवन की लाली।
किन्तु पतंग-भाग्य-लिपि काली,
किसका वश चलता है?
दोनों ओर प्रेम पलता है।

निर्भ्रांत कहा जा सकता है कि 'साकेत' की कथा उर्मिला की कथा है। बाकी सारी कथा प्रसंगवश जीवन की व्यापकता के कारण आ गई है। गुप्त जी ने राम की कथा को विस्तार नहीं दिया। एक प्रमुख कथा में जितना अंश राम का होना चाहिए था उतना ही है।

वरिष्ठ अनुवादक/मुख्यालय
पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर

भारतीय रेल में डीईएमयू का महत्व

अनुज कुमार श्रीवास्तव

भारतीय रेल में पैसेंजर ट्रांसपोर्टेशन हेतु डीजल इलेक्ट्रिक मल्टिपल यूनिट (डीईएमयू) एक महत्वपूर्ण एवं उपयोगी साधन है। दैनिक यात्रियों को कम दूरी पर शीघ्रता से पहुंचाने के लिये डीईएमयू गाड़ी संचालन सुचारु एवं सुव्यवस्थित होना अतिआवश्यक है क्योंकि इसमें पैसेंजर ट्रांसपोर्टेशन हेतु विभिन्न विशेषताएं होने के कारण इसका महत्व और भी बढ़ जाता है जैसे इसमें अधिक यात्रियों को ले जाने की क्षमता है क्योंकि इसमें पैसेंजरों के लिये बैठने की सीटें व खड़े होने का स्थान अधिक है। गद्दीदार सीटें एवं टयूब लाईट्स, पंखों का समुचित प्रबंध है। इसमें ईंधन की खपत कम है और गति बढ़ाने तथा घटाने की क्षमता अधिक होने के साथ इसे हर रूट पर चलाया जा सकता है।

डीईएमयू रेक को टर्मिनल स्टेशन पर रिवर्स करने की जरूरत नहीं है क्योंकि इसमें गाड़ी के दोनों तरफ डीपीसी/डीटीसी होने के कारण रेक को किसी भी दिशा में चलाया जा सकता है जिससे समय की बचत होती है और इसमें एअर स्प्रिंग होने के कारण राईड इंडेक्स अच्छा है जिससे यात्रा आरामदायक होती है, साथ-ही-साथ एक डीपीसी के खराब होने पर ब्लाक खण्ड जाम नहीं होता है क्योंकि इसमें दूसरी डीपीसी होने से सेक्शन क्लीयर किया जा सकता है। नई विकसित तकनीक का उपयोग होने के कारण इसे अधिकतम 110 कि.मी./घंटा से चलाया जा सकता है जिसके कारण कम समय में अधिक ट्रिप करके यात्रियों को अपने गंतव्य पर पहुंचाया जाता है। इन उपयोगिताओं के कारण भारतीय रेल में डीईएमयू का महत्व दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है।

मुख्य लोको निरीक्षक
एम.एस.टी.सी.,
पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर

स्वभाव-धर्म का पालन

एक बार संत एकनाथ गोदावरी में स्नान कर रहे थे कि उन्हें सामने पानी में एक बिच्छू बहता दिखाई दिया। उन्होंने आगे बढ़कर उसे पकड़ लिया, किंतु जैसा कि बिच्छूओं का स्वभाव है, बिच्छू ने उनकी हथेली पर डंक मारा। एकनाथ जी ने उस ओर ध्यान न देकर बिच्छू को किनारे रख दिया और पुन: स्नान करने लगे। अकस्मात लहरों का झोंका आया और उसने किनारे के बिच्छू को अपनी चपेट में ले लिया। एकनाथ जी ने बिच्छू को दोबारा बहते देखा, तो फिर से उसकी रक्षा की और उसे किनारे पर रख दिया। बिच्छू ने इस बार भी डंक मारा। संत चुपचाप हथेली को मलने लगे। लहर किनारे पर फिर आई और बिच्छू को बहा ले गई। संत ने इस बार भी उसकी रक्षा की और उसके डंक का वार सहा।

समीप ही एक व्यक्ति नहा रहा था। उसने वह सब देखा, तो एकनाथ जी से पूछा, यह बिच्छू आपको बार-बार डंक मार रहा है और आप बार-बार उसकी रक्षा कर रहे हैं। क्या ऐसे दुखदायी जीव पर दया दिखाना उचित है? एकनाथ स्वामी ने जवाब दिया, इसमें अनुचित क्या है? मैं अपने स्वभाव का धर्म उसके साथ बरत रहा हूँ और वह अपने स्वभाव के धर्म का पालन कर रहा है। फिर हमें अपने स्वभाव धर्म से क्यों विमुख होना चाहिए?संत वही होता है, जो सामने वाले के व्यवहार के आधार पर अपना स्वभाव न बदले। यदि कोई उसके साथ बुरा बर्ताव कर रहा है, तो वह हमेशा उसके साथ अच्छाई के साथ ही पेश आता है।

कथासार-बुरा व्यक्ति भी अगर किसी परेशानी में है, तो उसकी मदद करनी चाहिए।

◆ संस्मरण ◆

छितौनी-बगहा परियोजना

एल.एन. मालवीय

हिमालय के धवलागिरि पर्वत से अवतरित पतितपावनी गंगा की एक प्रमुख सहायक नदी जिसे नेपाल में नारायणी अथवा शालीग्रामी(शालीग्राम पत्थर पाये जाने के कारण) कहा जाता है, को भारत वर्ष में बड़ी गंडक के नाम से जाना जाता है। यह नदी तिब्बत की काली गंडकी, उत्तरी काठमाण्डू की त्रिशूली गंगा व अन्य सहायक नदियों से मिलकर पर्वतों के मध्य के संकुचित मार्ग से होते हुये भारत के मैदानी इलाकों में प्रचंड प्रवाह से नेपाली सीमा के निकट त्रिवेणी (भैंसालोटन) नामक स्थान पर प्रवेश करती है। त्रिवेणी से आगे बढ़ने पर यह नदी कुछ किलोमीटर पश्चिम की ओर बहती है फिर दक्षिण की तरफ उत्तर प्रदेश व बिहार में प्रवेश कर जाती है। बिहार में पटना के पास यह नदी गंगा में मिल जाती है। उद्गम स्थान से इसकी कुल लम्बाई 580 कि.मी. है जिसमें 260 कि.मी. नेपाल में 45 कि.मी. उत्तर प्रदेश में व शेष 275 कि.मी. बिहार में है।

गोरखपुर-मुजफ्फरपुर बरास्ता बगहा-नरकटियागंज मीटर गेज रेल मार्ग पर छितौनी व बगहा स्टेशनों के मध्य सन् 1912 में 686 मीटर लंबा मीटर गेज रेल पुल गंडक नदी पर बनाया गया था। वर्ष 1924 की ऐतिहासिक बाढ़ में नदी का प्रवाह नाटकीय ढंग से बदल गया तथा इस पुल का पाया सं.-14 व दाहिना एबटमेंट ध्वस्त हो गया। अब यह नदी लगभग 8 कि.मी. पश्चिम की तरफ होकर बहने लगी। इसके कारण छितौनी व बगहा स्टेशनों के मध्य यातायात भंग हो गया। वर्ष 1942 तक नदी को पुन: अपने स्थान पर लाने का अथक प्रयास किया गया। लेकिन, नदी की घुमंतु प्रवृत्ति के कारण यह संभव नहीं हो पाया क्योंकि लगभग हर वर्ष यह नदी चौड़ाई में अपना बहाव क्षेत्र बदलती रही। अनियंत्रित बहाव एवं निरंतर धारा बदलने के कारण लगभग 9 कि.मी. क्षेत्र में खादिर भी बन गया। पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं बिहार की जनता दशकों तक इस नदी का कहर झेलती रही और प्रशासन निरीह होकर अपार जन-धन की हानि का मूक दर्शक बनती रही। अंतत: 1942 में सारे प्रयास छोड़ दिये गये और पुल निर्माण की आशाएं धूमिल हो गईं।

वर्ष 1971 में पुन: एक बार भीषण बाढ़ आई और समूचे उत्तर प्रदेश व बिहार में त्राहि-त्राहि मच गई। इस आपदा एवं विनाश का चित्रण संबंधित सांसदों ने लोकसभा में बड़े ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया। तत्कालीन सिंचाई मंत्री व जाने माने सिविल इंजीनियर श्री के.एल.राव ने गंडक नदी पर पुल बनाने की चुनौती स्वीकार किया। उन्होंने स्वयं बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों का दौरा किया तथा पुल निर्माण हेतु एक कमेटी के गठन का आदेश दिया, जिसे गंडक हाईलेविल टेकनिकल कमेटी का नाम दिया गया। कमेटी ने कई बार कार्यस्थलों का निरीक्षण किया और इस घुमंतु नदी को बांध कर मुख्य धारा में एक निश्चित मार्ग पर लाने हेतु पुणे तथा रूड़की के प्रयोगशालाओं में माडल बनाकर अध्ययन भी किया। रेल सह सड़क पुल के निर्माण से पहले कई कंट्रोल प्वाइंट तथा बीरभर स्पर का (प्रस्तावित रेल सह सड़क पुल से 7 कि.मी. अप स्ट्रीम में) निर्माण एवं दो गाइड बंधों के निर्माण की संस्तुति की।

रेल मंत्रालय ने इस परियोजना को वर्ष 1973-74 में स्वीकृति प्रदान की। यह एक बहुउद्देशीय परियोजना थी। इस कारण कार्य के अनुसार इसकी लागत सभी सहभागियों तथा रेल मंत्रालय, जल संसाधन मंत्रालय, उत्तर प्रदेश एवं बिहार सरकार में कार्य के अनुसार बांट दी गई। विभिन्न राजनैतिक कारणों से इस परियोजना का कार्य 1989 तक बाधित रहा। क्षेत्रीय जनता के अत्यधिक दबाव से इस परियोजना का विधिवत प्रारंभ 7 जनवरी 1990 से हुआ। तकनीकी कारणों से इस नये पुल का निर्माण पुराने ध्वस्त पुल से लगभग 7 कि.मी. हटकर नदी के बहाव के ऊपर की तरफ बनाना तय हुआ। इस कारण छितौनी स्टेशन मुख्य रेलमार्ग से छूट गया तथा एक नया रेलवे स्टेशन पनियहवा बनाने की आवश्यकता हुई। 64 मीटर के 14 स्पैन वाले 896 मीटर लंबे मीटर गेज रेल पुल व

गाइड बंधों का निर्माण 1996 में कांटीनेंटल कंस्ट्रक्सन कंपनी व पुल के स्टील स्ट्रक्चर का कार्य बी.बी.जे. द्वारा किया गया। पुल की मजबूती का आलम यह है कि इसकी नींव 12 मी. व्यास के पानी के निम्नतम स्तर से 40 मीटर गहरे कुंए पर रखी गई है जबकि नदी के बहाव के कारण सामान्य कटाव, बाढ़ के उच्चतम लेविल नीचे तक ही है। वर्ष 1998 में आमान परिवर्तन के समय पुल पर की छोटी लाइन को बड़ी लाइन में बदल दिया गया तथा पुल में कोई अन्य बदलाव आवश्यक नहीं हुआ।

लेकिन सड़क पुल निर्माण का कार्य जिसे रेल पुल के पाये पर ही होना था, एक बार फिर विभिन्न कारणों से अधर में लटक गया। अंततः "देर आयद दुरूस्त आयद" की उक्ति चरितार्थ करते हुए इसका निर्माण रेलवे की सहयोगी संस्था इरकान इंटरनेशनल लिमिटेड द्वारा किया गया। इसका निर्माण एम:40 ग्रेड द्वारा निर्मित पी.एस.सी. बाक्स गर्डरों द्वारा किया गया है। इसकी लंबाई व स्पैन रेलवे पुल की ही तरह है। इस पुल के ऊपर 2 लेन की 7.5 मी. चौड़ी सड़क है तथा इसके एक तरफ पदयात्रियों की सुविधा हेतु 23.5 से.मी. ऊंचाई पर 1.5 मीटर चौड़ा फुटपाथ बनाया गया है। इस सड़क के निर्माण के दौरान जंगल पार्टी नामक डाकुओं का गिरोह बहुत ही सक्रिय था जो लूटपाट एवं अपहरण की घटनाओं को करता रहता था। इनके आतंक के कारण गरमी के मौसम में भी जंगल क्षेत्र में शाम चार बजे के पहले सभी निर्माण गतिविधियों को रोक देना पड़ता था। ऐसी दशा में अक्सर सी. आर.पी.एफ. एवं पुलिस की सहायता लेनी पड़ती थी। सभी रेल कर्मचारियों ने जान पर खेलकर इस पुल के निर्माण में रात-दिन कठोर परिश्रम किया लेकिन मेरे सहकर्मी कार्य निरीक्षक श्री रमेश चन्द्र जायसवाल जिनका कि जंगल पार्टी ने एक बार अपहरण भी कर लिया था एवं रेलपथ निरीक्षक श्री कृष्ण मोहन सिंह का योगदान अविस्मरणीय रहेगा। इसके लिए समय-समय पर प्रशासन द्वारा पुरस्कृत भी किया गया। इस पुल के निर्माण में आधुनिकतम तकनीक जैसे प्री-स्ट्रेसिंग, पंप कंक्रीट व वैकुवम डीवाटरिंग आदि का उच्च गुणवत्ता से प्रयोग किया गया है। यह इस बात से सिद्ध होता है कि निर्माण के 10 वर्षों से भी अधिक समय बाद भी इसमें किसी मरम्मत की आवश्यकता नहीं पड़ी। देश के दो महत्वपूर्ण प्रदेश उत्तर प्रदेश एवं बिहार को जोड़ने वाली गंडक नदी पर बने इस पुल से कुशीनगर, महराजगंज, बगहा व पूर्वी चंपारण की क्षेत्रीय जनता का बहुप्रतीक्षित सपना साकार हुआ। दशकों से बाढ़ की विभीषिका झेलती और कपरधिक्का घाट (जहाँ पर पुल बना है) पर धक्के खाती कपार धिकवाती जनता के लिये यह पुल एक वरदान से कम नहीं है।

इस सड़क पुल के निर्माण से पूर्वी चंपारण के श्रमिकों के लिये दिल्ली, बंगलौर जैसे शहरों में प्रवजन कर रोजगार के अवसर बढ़ गये। गोरखपुर के व्यापार को भी बिहार का एक बड़ा क्षेत्र मिलने से नई ऊंचाईयां प्राप्त हुईं एवं अंतरप्रांतीय अपराध पर भी अंकुश लगा।

भूतपूर्व अधिशासी अभियंता/निर्माण
रेती रोड, माया बाजार, गोरखपुर-273001
संपर्क:778482166

- **जैसे तुम पौधे को उगा नहीं सकते, वैसे ही तुम बच्चे को सीखा नहीं सकते। जो कुछ तुम कर सकते हो, वह केवल सकारात्मक पक्ष में है- तुम केवल सहायता दे सकते हो। वह तो एक आंतरिक अभिव्यंजना है, वह अपना स्वभाव स्वयं विकसित करता है- तुम केवल बाधाओं को दूर कर सकते हो।**

- **किसी की भी निंदा मत करो। अगर तुम सहायता कर सकते हो तो करो वरना अपने हाथों को अंदर कर लो और उन्हें अपने रास्ते जाने दो।**

स्वामी विवेकानंद

दिल ही तो है

अजय दूबे

यह अब बीते जमाने की बात हो गयी है कि दिल की बीमारियां एक वर्ग विशेष को ही होती है। अब दिल के रोगी हर तबके में मिल जाते हैं। हार्ट अटैक तो खास तौर पर रईस वर्ग के पुरुषों की बीमारी समझी जाती थी, परंतु अब तो इसकी चपेट में महिलाएं भी उतनी ही हैं जितने पुरुष। आंकड़े बताते हैं कि लगभग 20 वर्ष पहले तक महिलाओं में दिल के रोग बहुत कम थे, परंतु अब देश में 90-95 लाख से ज्यादा महिलाएं दिल की मरीज हैं।

आखिर इसका कारण क्या है? चिकित्सकों का कहना है कि औरतों में दिल के रोग का बढ़ना सिर्फ तनाव के कारण है। यह तनाव बदलती जीवन शैली के अतिरिक्त बोझ से भी है। इसके अलावा और भी कई वजहें है जो दिखने-सुनने में आम और जरा सी है, परंतु असर बहुत खतरनाक रूप से करती है।

हमारे देश में 20-25 वर्ष पहले तक महिलाओं में दिल की बीमारियां सुनने में लगभग नहीं के बराबर आती थी। यह बीमारी पुरुषों में ही देखने को मिलती थी, वह भी चालीस-पैंतालीस वर्ष की उम्र के बाद। हिन्दुराव अस्पताल नई दिल्ली के डॉक्टर के.ए.पांसी इस बारे में बताते हैं कि दिल की बीमारी होना कोई नई बात नहीं है। यह बीमारी बहुत पहले भी थी, किंतु साधन और जानकारी के अभाव में मरीज घर पर ही खत्म हो जाते थे। कस्तूरबा गांधी अस्पताल के डॉक्टर गोपाल दास वत्स के अनुसार महिलाओं में दिल की बीमारियां आजकल 20-25 वर्ष की उम्र में भी देखने में आ रही है और इसके कई कारण हैं। पोषण का स्तर महिलाओं में कुछ ज्यादा ही हो जा रहा है। खासकर उच्च मध्य वर्ग की महिलाओं में कोलेस्ट्रोल, इसलिए बढ़ रहा है कि उनकी खान-पान की आदतें ठीक नहीं है। इसके अलावा ये लोग शारीरिक मेहनत भी बहुत कम करती हैं जो कोलेस्ट्रोल को हजम नहीं होने देती। काम का दबाव और तनाव भी इन दिल की बीमारियों को बुलावा देता है।

'दृष्टि केयर फाउण्डेशन' के अध्यक्ष और मूलचंद अस्पताल से जुड़े कर्नल के.एल. चोपड़ा के मुताबिक जीवन शैली में आए फर्क ने महिलाओं की कामकाजी स्थितियां बदल दी हैं। पहले के मुकाबले उन पर काम का बोझ काफी बढ़ गया है और इससे तनाव होना स्वाभाविक है। तनाव का गहरा असर दिल के रोगों के रूप में ही सामने आता है। यह पूछने पर कि क्या तनाव महिलाओं में 20-25 वर्ष पूर्व नहीं होता था, भले ही वजहें भिन्न हो? उनका कहना था कि 'तनाव आजकल कुछ ज्यादा ही है।' घर और बाहर के बढ़ते सामाजिक-आर्थिक दबाव से होने वाले तनाव ही की वजह से महिलाओं का प्राकृतिक सुरक्षा तंत्र कारगर नहीं हो पा रहा है। डाक्टर चोपड़ा और उनके सहयोगी डा. के.के. अग्रवाल के अनुसार महिलाओं में दिल के रोगों से बचाव के लिए कुदरती इंतजाम भी है। उनके डिम्बाशय में बनने वाले हार्मोन एस्ट्रोजन से एच.डी.एल. नामक उपयोगी कोलेस्ट्रोल को बल मिलता है। महिलाओं के हृदय में यह सुरक्षित रहता है, परंतु अब बढ़ते जाते दिल के रोगों ने बता दिया है कि यह सुरक्षा तंत्र ज्यादा कारगर नहीं रह पाता।

औरतों को एंजाइना ज्यादा होता है। दिल का दौरा अर्थात 'हार्ट अटैक' बढ़ती उम्र में जाकर होते हैं। महिलाओं में यह दौरा छिटपुट बीमारी की पहचान से शुरू होता है, परंतु पुरुषों में तो इस बीमारी का सीधा हमला होता है। जैसे सीधे छाती में दर्द होना। डा. चोपड़ा ने महिलाओं में इस रोग की दूसरी वजहें-धूम्रपान, कम व्यायाम, बढ़ता वजन वगैरह बतायी। उच्च मध्यवर्गीय महिलाओं में धूम्रपान की आदत भी काफी बढ़ी है। तम्बाकू, पान और जर्दा का अत्यधिक सेवन और निचले तबके में बीड़ी पीने की आदत भी इसके मुख्य कारण हैं। इसके अलावा जिनके पति धूम्रपान करते हैं, इनके लिए भी इस बीमारी का खतरा हो सकता है। हिन्दुस्तान में औरतों में अकेले काम के दबाव को सहते चले जाने की प्रवृत्ति है क्योंकि पुरुष बिल्कुल मदद नहीं करते जबकि विदेशों में ऐसा नहीं है।

इस घातक बीमारी से बचाव के पहलुओं में कई

जरूरी बातें जानना आवश्यक है। अगर परिवार में पहले से कोई दिल का रोगी चला आ रहा है तो बीमारी का पारिवारिक इतिहास होने के नाते दूसरे सदस्यों को सावधान रहने की जरूरत है। पहले से ही व्यायाम करने की आदत डाले। धूम्रपान न करें, रक्तचाप की जांच भी नियमित करवाते रहें। मोटापा बिल्कुल न बढ़ने दें, क्योंकि मोटापे से कोलेस्ट्रोल बढ़ता है। इसके बढ़ने पर कोलेस्ट्रोल कम करने की दवायें खानी पड़ेगी और ये दवाएं दूसरी बीमारियों को जन्म दे सकती हैं। इसतरह की खबरें पहले भी प्रकाशित हो चुकी हैं। इस बारे में सर्वोदय अस्पताल के डाक्टर नरेश पमनानी कहते हैं कि इससे बड़ी आंत का कैंसर, पथरी और मानसिक बीमारियां हो रही हैं।

कई महिलाएं गर्भ निरोधक गोलियां भी बिना डाक्टरी सलाह के धड़ल्ले से लेती रहती हैं पर गोली लेना, न लेना भी कई बातों पर निर्भर करता है। डाक्टर चोपड़ा बताते है कि इससे खून के थक्के जमने अर्थात् ब्लड क्लेटिंग की क्रिया बढ़ जाती है और अगर किसी महिला को रक्तचाप, मधुमेह या उच्च रक्तचाप जैसी अन्य बीमारियां हो, तो डाक्टरी सलाह हर हाल में जरूरी है। दिल के रोगों से बचने के लिए अमन हॉस्पिटल के डा. आफताब आलम खानपान पर विशेष ध्यान देने की बात करते हैं।

दिल्ली के हिन्दुराव अस्पताल के डाक्टर पासी महिलाओं में इस रोग की वजह पूछते ही बताते हैं कि महिलाओं में मासिक धर्म बंद होने के बाद दिल के रोगों का खतरा बढ़ जाता है और अगर बीमारी का पारिवारिक इतिहास है तो खटका ज्यादा ही रहता है। जो महिलाएं शारीरिक श्रम कम करती हैं ज्यादातर बैठी रहती हैं, उनमें भी दिल के दौरे की घटनाएं ज्यादा देखने में आयी हैं। एक्यूप्रेशर पद्धति से चिकित्सा करने वाले डाक्टर बसंत अग्रवाल कहते हैं कि चालीस वर्ष की उम्र के बाद महिला-पुरुष दोनों में इसकी वजहें एक-सी रहती हैं किंतु यह भय का मुद्दा नहीं, वरन् जरूरत है अपनी जीवन-शैली को थोड़ा-सा सुधार लेने की और एक्यूप्रेशर चिकित्सा पद्धति में तो इसका बहुत ही कारगर उपाय है।

गरीबों को भी दिल के दौरे पड़ते हैं। उच्च वर्ग में अगर अपने स्तर को बनाये रखने का तनाव है, तो गरीबों में रोजी-रोटी की फिक्र है। उसका तनाव तो सबसे ज्यादा होता है। पहले दिल की बीमारी न होने का मुख्य कारण डा. आफताब आलम बताते हैं कि यह रोग पहले भी था पर इसे पता करने के इतने साधन नहीं थे।

खैर, कारण जो भी हो जरूरत है बचाव की, क्योंकि 'दुर्घटना से देर भली।' अपनी जीवन-शैली पर एक व्यापक दृष्टि डालकर महिलाएं अपने-आपको अगर सुनियोजित ढंग से कार्य की अधिकता में झोंके तो यह बीमारी उन्हें लग ही नहीं सकती। आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति की छोटी-मोटी सलाहें मानकर भी महिलाएं इस बीमारी से सदा बची रह सकती हैं।

वरिष्ठ लिपिक
प्रमुयांइं कार्यालय
पूर्वोत्तर रेलव, गोरखपुर
संपर्क:9415379360



मेरे नगपति! मेरे विशाल!
साकार, दिव्य गौरव विराट
पौरुष के पूंजीभूत ज्वाल!
मेरी जननी के हिम-किरीट!
मेरे भारत के दिव्य भाल!
मेरे नगपति! मेरे विशाल!

रामधारी सिंह 'दिनकर'

◆ लेख ◆

गौतम बुद्ध

डा. एच.पी. सक्सेना

भारतवर्ष की पावन भूमि की परंपरा रही है कि यहां जब-जब अज्ञानता, कुरीतियां, पापाचार, अत्याचार आदि बढ़े हैं, तब-तब ईश्वरीय दूत के रूप में किसी-न-किसी महापुरुष ने जन्म लिया है। संत महात्मा और धर्म गुरुओं को सामाजिक समरसता, सद्भाव और सहिष्णुता का अग्रदूत माना जाता है। घर-परिवार, समाज और देश में जब भी संकट के बादल मंडराते नजर आते हैं तो वे मार्गदर्शक बनकर खड़े होते हैं।

इसी तारतम्य में भारतीय इतिहास के अनुसार करीब 563 ईसा-पूर्व लुम्बिनी में कपिलवस्तु के राजा शुद्धोदन की धर्मपत्नी महामाया ने एक पुत्र को जन्म दिया। जन्म के पांचवे दिन नामकरण किया गया और बालक का नाम सिद्धार्थ गौतम (गौतम कुल का नाम) रखा गया। शैशवास्था से ही सिद्धार्थ की धर्म की ओर अभिरुचि और प्रवृत्ति थी और वे धार्मिक प्रश्नों पर गंभीर विचार किया करते थे। जीवन के प्रारंभिक काल से समस्त प्राणियों के प्रति दया का भाव रखते थे। सिद्धार्थ बचपन से ही एकांतप्रिय, मननशील एवं दयावान प्रवृत्ति के थे।

स्वामीभक्त सारथी-छन्द द्वारा हांके जाने वाले रथ में बैठकर क्रीड़ोद्यान में जाते समय मार्ग में इन्होंने वृद्ध, रोगी, दु:खी और शवयात्रा देखी उससे उनके मन में विरक्ति उत्पन्न हुई और सांसारिक सुख-सुविधा त्यागने का मन बना लिया। यह समाचार सुनकर राजा ने गृह के प्रेम-पाश में बांधने के सभी उपाय किये। इन्होंने इनके लिये संसार की सभी भोग सामग्री जुटा दी किंतु भाग्य का विधान कुछ और ही था। उन्हीं दिनों बुद्ध की पत्नी यशोधरा को एक पुत्र उत्पन्न हुआ था जिसका नाम राहुल रखा गया था। इन्होंने सोचा कि इस बंधन को तोड़ना दुष्कर होगा, किंतु बड़े यत्न से इस बाधा पर विजयी होकर वे एक दिन रात्रि के समय राजप्रासाद से निकल पड़े।

दया और करुणा के अवतार गौतम बुद्ध ने सांसारिक बंधन में बांधने वाले राज्य, संपत्ति, स्त्री और पुत्र का त्याग कर दिया एवं ज्ञान और सत्य का अन्वेषण किया। इस कार्य में उन्हें बड़े-बड़े कष्ट झेलने पड़े किंतु वे तनिक भी निराश नहीं हुए। चारों ओर से इन पर मार (कामदेव) के आक्रमण होते रहे किंतु वे अचल रहे। जिसके फलस्वरूप इन्हें सत्य का दर्शन हुआ, जिस वट के वृक्ष के नीचे गौतम को ज्ञान प्राप्त हुआ, वह 'बोधि-वृक्ष' अर्थात 'ज्ञान का वृक्ष' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। उनका कहना था कि-'जिसने स्वयं को वश में कर लिया, उसकी जीत को देवता भी हार में नहीं बदल सकते।'

वे वाराणसी से तीन मील दूरी पर सारनाथ नाम से विख्यात एक रमणीक वन में गये और वहां रह कर इन्होंने चार आर्य सत्यों का प्रचार किया। यह उल्लेखनीय है कि अद्भुत नगरी वाराणसी और बुद्ध के प्रथम ज्ञान-उपदेश के कारण विश्व में अपनी अलग पहचान रखने वाला सारनाथ एक-दूसरे से भावनात्मक और भौगोलिक रूप से गहन रूप से जुड़े हैं। सारनाथ बुद्ध की जीवनचर्या से जुड़ा हुआ एक प्रमुख स्थल है। बौद्ध गया में बोध प्राप्ति के बाद सर्वप्रथम महात्मा बुद्ध ने सारनाथ में पंचवर्गीय ऋषियों को मध्यम मार्ग और निर्वाण का उपदेश दिया था। बौद्धमत के अनुसार सारनाथ में ही भगवान बुद्ध ने 'धर्म-चक्र प्रवर्तन' किया। यही वह पावन स्थली है जहां बुद्ध ने जीवन की मूल समस्याओं के समाधान निरूपित किये थे। यहीं पर उन्होंने संघ की स्थापना भी की थी। धर्म और संघ की स्थापना के कारण सारनाथ बौद्धों का प्रमुख तीर्थस्थल बना हुआ है।

हमारे देश भारत में सामाजिक परिवर्तन के आंदोलन में सामाजिक क्रांति के महानायकों की खास भूमिका रही है। हमारे संतों, गुरुओं व महापुरुषों ने आजीवन बड़ा संघर्ष किया और अनगिनत कुर्बानियां दी हैं। इन महापुरुषों के अनवरत संघर्ष और बलिदान की एक लंबी श्रृंखला है जिनमें महान मानवतावादी गौतम बुद्ध, संत कबीर, रविदास, ज्योतिबा फुले आदि का नाम उल्लेखनीय है। डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि-'यह भी ध्यान में रखने की बात है कि पूर्वी प्रदेश में भारतीय इतिहास के आदि काल से रूढ़ियों और

परंपराओं के विरूद्ध विद्रोह करने वाले संत होते रहे हैं।'

गौतम बुद्ध के उपदेशों एवं वचनों का प्रचार- प्रसार सबसे ज्यादा सम्राट अशोक ने किया। कलिंग युद्ध में हुए नरसंहार से व्यथित होकर अशोक का हृदय परिवर्तित हुआ। उन्होंने महात्मा बुद्ध के उपदेशों को आत्मसात करते हुए इन उपदशों को अभिलेखों द्वारा जन-जन तक पहुंचाया। डा. भीमराव अंबेडकर भी बौद्ध धर्म के अनुयायी थे। डा. अंबेडकर के प्रयासों से इस धर्म को आगे बढ़ाने में काफी मदद मिली है। गुप्त साम्राज्य के पतन के बाद मौखरियों का साम्राज्य सबसे शक्तिशाली हुआ और इस साम्राज्य का संस्थापक हर्षवर्धन स्वयं ब्राह्मण और क्षत्रिय नहीं बल्कि वैश्य था और स्वाभावत: उसने बौद्ध धर्म में दीक्षा ली। उसके समय टिमटिमाते हुए बौद्ध धर्म की दीपशिखा एक बार पुन: भभक उठी।

बौद्ध धर्म के प्रचार-प्रसार के लिये भारतीय रेल भी पीछे नहीं है। 2550वीं पुण्यतिथि-'महापरिनिर्वाण दिवस' सन् 2006 में बी.एस.पी. की राष्ट्रीय अध्यक्ष सुश्री मायावती ने तत्कालीन रेल मंत्री को पत्र लिख कर 'महापरिनिर्वाण एक्सप्रेस' चलाने का अनुरोध किया था। भारतीय रेल ने उसी नाम से बौद्ध विशेष ट्रेन चलाई जो बौद्ध पर्यटकों या अन्य बौद्ध पर्यटक स्थलों की यात्रा के इच्छुक पर्यटकों को सात दिन-आठ रात में पूरे बौद्ध सर्किट की यात्रा कराती है। यह दिल्ली से बोधगया, राजगीर, नालंदा, वाराणसी, सारनाथ, कुशीनगर, लुम्बिनी, श्रावस्ती, आगरा की यात्रा करा कर दिल्ली वापस पहुंचाती है। इसमें यात्रा करने वालों के लिये वातानुकूलित बोगियों में यात्रा के अलावा होटल में ठहरने की व्यवस्था एवं स्थानीय भ्रमण की सुविधा उपलब्ध करायी जाती है।

गौतम बुद्ध ने जाति भेदभाव, ऊंच-नीच तथा आपसी भेदभाव की मानसिकता से बहुत ऊपर उठ कर समाज को मानवता और इंसानियत एवं आपसी बराबरी का संदेश देकर समस्त मानव समाज को चहुँमुखी विकास की दिशा में अग्रसर किया जिस कारण वे भगवान बुद्ध भी कहलाये। देश में सामाजिक परिवर्तन के प्रणेता संतों गुरुओं व महापुरुषों को बौद्ध संस्कृति ने अत्यंत प्रभावित किया है। तथागत गौतम बुद्ध द्वारा मानव समाज के समक्ष प्रदर्शित नैतिक एवं आध्यात्मिक अनुशीलन तथा मानवीय मूल्यों का मार्ग सामाजिक परिवर्तन का आधार स्तंभ रहा है। महात्मा गौतम बुद्ध के जीवन चरित्र से इस बात की शिक्षा मिलती है कि 'प्रत्येक मनुष्य को बिना किसी प्रकार का भेदभाव किये सभी से नि:स्वार्थ भाव से प्रेम करना चाहिए।'

महात्मा बुद्ध आजीवन सभी नगरों में घूम-घूमकर अपने विचारों को प्रसारित करते रहे। भ्रमण के दौरान जब वे पावा पहुंचे वहां उन्हें अतिसार रोग हो गया था। तत्पश्चात कुशीनगर गये जहां 483 ईसा पूर्व बैशाख पूर्णिमा के दिन अमृत आत्मा मानव शरीर को छोड़कर ब्रह्मांड में लीन हो गई। इस घटना को महापरिनिर्वाण कहा जाता है। गौतम बुद्ध कहते थे कि तीन के आंसू पवित्र होते हैं-'प्रेम के, करुणा के और सहानुभूति के।'

भगवान बुद्ध प्राणी हिंसा के सख्त विरोधी थे। उनका कहना था कि- 'जैसे मैं हूं वैसे ही वे हैं और जैसे वे हैं वैसा ही मैं हूँ'- इसप्रकार सबको अपने जैसा समझकर न किसी को मारें, न मारने को प्रेरित करें। कुछ लोग ऐसे होते हैं जो जीवन तो जीते हैं लेकिन इसके साथ ही वे अपने व्यक्तित्व से समाज पर अपनी एक अमिट छाप भी छोड़ जाते हैं। गौतम बुद्ध ऐसे ही महामानव थे। हजारों वर्ष व्यतीत हो जाने के बाद भी उनका जीवन दर्शन और शिक्षा आज भी न केवल प्रासंगिक है वरन् संसार के लिये प्रेरणा का स्रोत बनी हुई है। यही कारण है कि उनकी गणना दिव्य शक्ति के रूपों में भी की जाती है क्योंकि उनके अनुसार तीन से घृणा नहीं करो- 'रोगी से, दु:खी से, और निम्न जाति से।' इसी कारण वे दया और करुणा के अवतार माने जाते हैं।

मुख्य कार्यालय अधीक्षक(सेवानिवृत्त)
सी.आर.डब्ल्यू.एस.,पश्चिम मध्य रेलवे,
भोपाल (मध्य प्रदेश)
संपर्क:9800099222

**सुख का आधार मनुष्य की मन:स्थति पर निर्भर करता है।
विनम्रता के बिना सभी सद्गुण व्यर्थ हैं।**

◆ लेख ◆

सूरदास के नेत्रों पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव

डा. हरिशंकर कुमार सिन्हा

शरीर के प्रत्येक अंग एवं उनके अवयवों पर किसी-न-किसी रूप से मनौवैज्ञानिक प्रभाव पड़ता है। नेत्र शरीर का एक प्रमुख अंग है। नेत्र आँख का पर्यायवाची शब्द है जो पंच ज्ञानेन्द्रियों में एक है। मनुष्य से लेकर इस जगत में जितने भी शरीरधारी प्राणी हैं उनमें कुल अट्ठाईस (28) तत्व होते हैं। ये अट्ठाईस तत्व निम्नलिखित हैं-

प्रकृति के तीन गुण (सत्वगुण, रजोगुण और तमोगुण)। सत्वगुण ही ज्ञान है, रजोगुण ही कर्म है और तमोगुण ही अज्ञान है। पुरुष, प्रकृति, महत्त्व, अहंकार, आकाश, वायु, तेज, जल और पृथ्वी-ये नौ तत्व हैं। श्रोत्र, त्वचा, चक्षु, नासिका और रसना-ये पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं। वाक्, पाणी, पाद, वायु और उपस्थ-ये पाँच कर्मेन्द्रियाँ हैं और मन जो कर्मेन्द्रिय और ज्ञानेन्द्रिय दोनों ही है अर्थात् कुल ग्यारह इन्द्रियाँ हैं। शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध-ये ज्ञानेन्द्रियों के पाँच विषय हैं। इस प्रकार तीन गुण, नौ तत्व, ग्यारह इन्द्रियाँ और पाँच विषय-कुल मिलाकर अट्ठाईस तत्व होते हैं। इन्हीं अट्ठाईस तत्वों की सहायता से सृष्टि की (रचना-स्थिति और उत्पत्ति) और संहार (विनाश) होते रहता है। ये अट्ठाईस (28) तत्त्व निम्नलिखित हैं-

1.सत्वगुण, 2.रजोगण, 3.तमोगुण, 4.पुरुष, 5.प्रकृति, 6.महत्त्व, 7.अहंकार, 8. आकाश, 9.वायु, 10.तेज, 11.जल, 12.पृथ्वी, 13.श्रोत्र, 14.त्वचा, 15.चक्षु, 16. नासिका, 17.रसना, 18.वाक्, 19.पाणि, 20.पाद, 21.पायु, 22. उपस्थ, 23.मन, 24.शब्द, 25.स्पर्श, 26.रूप, 27.रस और 28.गंध।

कुछ विद्वानों का मानना है कि देह, इन्द्रियां और प्राणादि की उत्पत्ति पंचभूतों से ही हुई है। पंचभूत निम्न-आकाश, वायु, तेज (अग्नि), जल और पृथ्वी। इन पाँचों भूतों के साथ छठा जीव और सातवाँ परमात्मा से मिलकर सृष्टि की रचना हुई है। सच तो यह है कि परमात्मा अव्यक्त पुरुष है जो जीव और जगत दोनों का साक्षी है। ये ही पूर्ण तत्व है। सभी विद्वानों ने अपने-अपने मत के अनुसार तत्वों की संख्या का उल्लेख किया है। कुल अट्ठाईस तत्व हैं।

अब प्रश्न उठता है कि क्या सूरदास (अंधा व्यक्ति) वास्तव में सामान्य व्यक्ति से अलग है? क्या सूरदास के नेत्र पर मनोविज्ञान का प्रभाव पड़ता है? इनका उत्तर जानने के पूर्व 'आँख की बनावट एवं कार्य' के विषय में संक्षेप में जानना चाहिए। मांसपेशियों से बनी हुई आँख की रचना तीन सतहों (Coats) से हुई है। सबसे ऊपर सतह को श्वेत-पटल (Sclerotic Coat) के नाम से जाना जाता है। श्वेत-पटल का अगला भाग थोड़ा उभरा हुआ तथा पारदर्शी (Transparent) होता है। इस पारदर्शी भाग को कौर्निया (Cornea) कहते हैं। इसी कौर्निया के द्वारा प्रकाश आँख में प्रवेश करता है। श्वेत-पटल के ठीक पीछे के भाग को मध्यपटल (Choroid) कहा जाता है। मध्यपटल में कौर्निया के ठीक पीछे परितारिका (Iris) होती है जिसके बीच में एक छिद्र होता है जिसे 'पुतली (Pupil)' कहा जाता है। कौर्निया से आता हुआ प्रकाश परितारिका के बीच में स्थित छिद्र (Pupil) से होकर आँख के भीतर स्थित लेंस (Lens) में पहुँच जाता है। लेंस (Lens) परितारिका के पीछे होता है। लेंस इस प्रकाश को 'अन्त:पटल (Retina)' तक पहुँचा देता है। अन्त:पटल को 'दृष्टिपटल (Retina)' के नाम से भी जाना जाता है। दृष्टिपटल के अंदर प्रकाश को ग्रहण करने वाले ग्राहक कोशिकाएँ दो प्रकार की होती हैं-एक को शलाकाएँ (Rods)कहते हैं जो अंधकार या मंद प्रकाश या रात में क्रियाशील होती है जबकि दूसरी को सूचियाँ (Cones) कहा जाता है जो तेज प्रकाश या दिन में क्रियाशील होती है। अन्त:पटल में स्थित फोबिया (Fovea) के पास जैसे ही प्रकाश पहुँचता है। वैसे ही प्रकाश जिस वस्तु (Object) का होता है उस वस्तु का स्पष्ट प्रतिबिम्ब फोबिया (Fovea) पर पड़ता है। चूँकि फोबिया में केवल सूचियाँ (Cones) पायी जाती हैं जिसके फलस्वरूप वे अधिक स्पष्ट दीख पड़ते हैं।

ग्राहक कोशिकाएँ (शलाकाएँ और सूचियाँ) जब प्रकाश को ग्रहण करती हैं तो वे उत्तेजित हो जाती हैं जिसके फलस्वरूप अन्त:पटल में तंत्रिका आवेग (Nerve Impulse) उत्पन्न होकर दृष्टि-पटल (Optic nerves) के सहारे मस्तिष्क

के पृष्ठपाली (Optic lobe) भाग में पहुँच जाता है। मस्तिष्क के पृष्ठपाली (Optic lobe) में पहुँचते ही वस्तु विशेष (Object) का दृष्टि संवेदन होने लगता है। इसे ही दृष्टिपात होना, कहा जाता है। किसी वस्तु को देखने की इसी दृष्टि संवेदना को 'आँख की रोशनी' से भी संबोधित किया जाता है। सूरदास में देखने की उक्त पूरी प्रक्रिया का अभाव होता है। यही कारण है उन्हें अंधा या दृष्टिहीन, नेत्रहीन, सूरदास आदि शब्दों से बोध कराया जाता है।

जीव वैज्ञानिकों और शरीर शास्त्रियों का मत है कि किसी वस्तु पर पड़ने वाली प्रकाश-तरंगें कौर्निया और पुतली से होती हुई लेंस पर पड़ती हैं। लेंस उन्हें दृष्टिपटल के खास भाग में भेज देता है जहाँ शलाका सूचियाँ उत्तेजित होकर तंत्रिका-आवेग (Nerve impulse) उत्पन्न करती है जो अंध-बिन्दु (Blind Spot) में जाती है। वस्तु का प्रतिबिंब अंध-बिन्दु पर उभरता है जहाँ से पुन: मस्तिष्क के पृष्ठपालि (Occipital lobe) में चला जाता है। वहाँ पहुँचते ही अंध-बिन्दु पर बनने वाले प्रतिबिंब का दृष्टि-संवेदन होने लगता है। इसी दृष्टि-संवेदन को दिखलाई देना या दृष्टिपात होना कहा जाता है।

उक्त संपूर्ण क्रिया-प्रतिक्रियाओं के बारे में विस्तार से 'आँख की बनावट और कार्य' के अंतर्गत पढ़ा जा सकता है। सूरदास या अंधा व्यक्ति में उक्त क्रियाओं का अभाव या कमी रहता है जिसके कारण उन्हें सूरदास कहा जाता है। सूरदास प्रत्यक्ष रूप से किसी वस्तु, व्यक्ति या स्थान को नहीं देख सकता है।

जब हम पुराणों में गोता लगाते हैं तब 'अंधक', 'घृतराष्ट्र' आदि ऐसे महापुरुषों की कथाएं पढ़ने को मिल जाती है जो अंधे थे।

अंधा 'अंधकार' का प्रतिफल है। यह कहना असंभव है कि एक सूरदास (अंधा कोई भी व्यक्ति) के जीवन में अंधकार क्यों छा गया और किसके कारण अंधकार प्राप्त हुआ जिसके फलस्वरूप ही सूरदास जैसे व्यक्ति का जन्म होता है। शिवपुराण के 'रूद्रसंहिता' के अंतर्गत 'अंधक' की जन्म-गाथा का वर्णन मिलता है। 'रूद्रसंहिता' के अनुसार-'उमा द्वारा शंभु के नेत्र मूंद लिये जाने पर वहां घोर अंधकार फैल गया। पार्वती के हाथों का महेश्वर के शरीर से स्पर्श होने के कारण अंधकार में शंभु के पसीने से अंधकासुर की उत्पत्ति हुई जिसका नाम 'अंधक' पड़ा।*

महाभारत में भी महाराज धृतराष्ट्र के जन्म के पहले की कथा पढ़ने से स्पष्ट हो जाएगा। धृतराष्ट्र की माता ने पराशर मुनि के पुत्र व्यास (कृष्णद्वैयपायन) जी के भयंकर एवं विकराल मुख, कुरूप, जटाधारी और काले रंग के मनुष्य को देखकर अपने नेत्र मूंद लिये थे जिसके कारण व्यास से अंधेपुत्र का जन्म हुआ जिसका नाम धृतराष्ट्र पड़ा।

इससे एक बात तो स्पष्ट हो जाती है कि मिलन के समय नेत्र-बंद कर लेने से अंधक पुत्र पैदा होने की संभावना अधिक बढ़ जाती है। यदि प्रेम-पाश में बंधते समय नेत्र खोले रहे और मधुर संबंध कायम किया जाए तब अंधा पुत्र के जन्म नहीं होने की संभावना अधिक बढ़ जाती है क्योंकि इसके पीछे मनोवैज्ञानिक कारण है। अंधा का पुत्र अंधा ही होगा, यह सही नहीं है।

नेत्र बंद कर लेने से घोर अंधकार छा जाता है। इसका एक अर्थ यह भी है कि मनुष्य के जीवन में महत्वाकांक्षा इतनी प्रबल हो जाती है कि वह अंधा हो जाता है अर्थात् उसकी बुद्धि मन के घोड़े पर सवार हो जाती है। नेत्र रहने के बावजूद वह सिर्फ अपना अर्थ साधता है, दूसरों को कष्ट देना, रक्त बहाना, क्रूर स्वभाव का हो जाना आदि ऐसे ही दुर्गुण उसके जीवन में फैल जाते हैं जो अंधकार का रूप ले लेते हैं और वह उसी अंधकार का फल बनकर अंधा-जीवन जीने के लिए विवश हो जाता है।

'सूरदास' का अर्थ वास्तव में बाहरी नेत्र का अभाव होना नहीं है, बल्कि अन्त:चक्षु के अभाव का प्रतीक ही 'सूरदास' है। ऐसा व्यक्ति अति महत्वाकांक्षी होता है और स्वभाव से कठोर हो जाता है। उसमें न्यायप्रियता के गुणों का पूर्णत: अभाव रहता है। उनके अंदर स्वार्थ की भावना अधिक प्रबल रहती है। उसकी पूर्ति करते-करते ही वह अंत में मृत्यु को प्राप्त कर लेता है। अन्त:चक्षु का अभाव होना ही 'सूरदास' का प्रथम लक्षण है।

नेत्रहीन व्यक्ति को आदर के साथ 'सूरदास' कहा जाता है जो व्यक्ति सूर (अंधा) होता है वह चर्म-चक्षु (बाह्य-चक्षु) से कुछ नहीं देख पाता है, परंतु ज्ञान-चक्षु एवं अंत:चक्षु से वह अभ्यंतर की वस्तुओं को देखता है। ज्ञान-चक्षु के खुल जाने पर

*शिवपुराण/रूद्रसंहिता/अध्याय 42/पृष्ठ सं. 404-405

मनुष्य संन्यास की स्थिति में चला जाता है और उनके लिए बाह्य-चर्म चक्षु अर्थहीन हो जाता है क्योंकि उनसे अंत:चक्षु एवं ज्ञान-चक्षु दिव्य नेत्र प्रदान करते हैं जिस कारण वह त्रिकालदर्शी हो जाता है। वह उस अदृश्य वस्तु, स्थान एवं प्राणी को देखने लगता है। ऐसा व्यक्ति ब्रह्म के अधिक समीप होता है। ऐसे कुछ प्रमुख सूरदास व्यक्तियों के नाम निम्नलिखित हैं-

विल्वमंगल सूरदास, हरिनारायण जी महाराज, प्रयाग नारायण त्रिपाठी, मलूकदास, मनोहर, नजीर, कोपावाई, भालचन्द्र स्वामी, वेणुदास, सूरिदेव, अम्बाबाई, स्वामी श्रीरामभद्राचार्य आदि। इन महात्माओं ने अपने-अपने ग्रंथों में अपने अंत:चक्षु एवं ज्ञान-चक्षु के आलोक में अपने अनुभवों का समावेश किया है जो अद्वितीय है। सामान्य पुरुष (नेत्र युक्त) ऐसा अनुभव नहीं कर सकता है और न ही लिख सकता है। विलक्षण प्रतिभा वाले व्यक्ति या व्यक्तियों के अंदर अंत:चक्षु के कारण ज्ञान की ज्योति प्रज्ज्वलित रहती है जो उनके मानस-पटल पर एक अद्वितीय आभा की किरणें विद्यमान रखता है। तभी तो विल्वमंगल सूरदास जी ने बालकृष्ण के क्रिया-कलापों और युवा श्रीकृष्ण के श्रृंगारिक कार्य-कलापों तथा महाभारत के युद्ध में अर्जुन को दिये गये 'गीता के उपदेशों' का जो वर्णन किया गया है उनमें पूर्णत: मनोविज्ञान की झलक देखी जा सकती है। 'रम्भा शुक संवाद', 'भर्तहरे त्रयशतकम्' एवं जयदेवकृत 'गीतगोविन्दम्' पूर्णत: मनोवैज्ञानिक ग्रंथ हैं जिनमें मन की विभिन्न स्थितियों के वर्णन हुए हैं। इतना ही नहीं, पाश्चात्य कवि मिल्टन (John Milton) अंधा थे, के 'पाराडाइज लास्ट' (Paradise Lost) एवं 'पाराडाइज रिगेन' (Paradise Regain) में मनोविज्ञान के तथ्य मिलते हैं। उसमें उनके मन की विभिन्न स्थितियों के वर्णन पढ़ने को मिलते हैं। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से विचार करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि सूरदास होकर भी वे अपने मनोनुकूल कार्य का संपादन करते हैं। उनके ज्ञानेन्द्रियों के साथ-साथ उसकी कर्मेन्द्रियां भी कार्य करती हैं। सूरदास अपनी ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों के सहारे अनेक रचनात्मक कार्य करते हैं। तभी तो भक्त विल्वमंगल सूरदास जी ने अंधा होकर भी 'सूरसागर', 'सूरसारावली', 'साहित्य लहरी', 'श्रीकृष्ण-माधुरी', 'सूर-विनय-पत्रिका', 'श्रीकृष्ण बाल-माधुरी', 'सूर-रामचरितावली', 'विरह-पदावली', 'अनुराग-पदावली' आदि जैसे ग्रंथों का सृजन किया है।

'अनुराग-पदावली' में सूरदास जी ने गोपियों के उन बड़भागी नेत्रों को लक्ष्य करके लिखा है-'जो श्यामसुन्दर की त्रिभुवनमोहन रूप-माधुरी पर न्योछावर हो गये हैं और रसलोभी भ्रमर की भांति सदा उसी पर मंडराते रहते हैं, एक क्षण के लिए भी वहां से हटते नहीं हैं।'

उक्त तथ्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि 'नेत्र' एक मनोवैज्ञानिक शब्द है। 'नेत्र' के अनेक क्रिया-कलाप होते हैं जिनसे व्यक्ति के मनोभावों की अभिव्यक्ति होती है। यह आँख ही है जिसके माध्यम से मनुष्य विभिन्न प्रकार के कार्यों के लिए किसी को प्रेरित करता है।

पंच इंद्रियों में 'नेत्र' का सर्वाधिक महत्व है क्योंकि इसमें किसी भी वस्तु को देखने-परखने की क्षमता होती है। इसकी भिन्न-भिन्न क्रियाएं प्रेम और आक्रोश को व्यक्त करती हैं। 'नेत्र' संस्कृत के 'नीत धातु' से निष्पन्न है जिसका अर्थ होता है-ले जाना। नेत्रहीन व्यक्ति न तो स्वयं आगे की ओर जा सकता है और न दूसरों को ही ले जा सकता है। इसलिए 'नेत्रहीनता' को व्याधि-विशेष की संज्ञा दी जाती है और रोगविहीन नेत्र को वरदान माना जाता है। नेत्र दो प्रकार के होते हैं- 1.बहि:चक्षु और 2.अंत:चक्षु।

बहि:चक्षु- मानव-शरीर में स्थित 'चर्म-नयन' को बहि:चक्षु या प्राकृत नेत्र कहते हैं, जिसकी बनावट एवं कार्य का वर्णन पूर्व में ही किया जा चुका है। बहि:चक्षु से हम संसार की भांति-भांति की चीजों, सौंदर्य एवं भौतिक साधनों को देखते हैं अर्थात्, बहि:चक्षु से बाह्य जगत दृष्टिगोचर होता है जो जीवात्मा को मोहित करता है।

चूंकि बहि:चक्षु का संबंध बाह्य जगत से रहता है। इसके द्वारा देखने के लिए अधिकतम दूरी की सीमा निर्धारित है। इसलिए वह वास्तविक ज्ञान को नहीं देख पाता है अर्थात् आत्मतत्व को वह समझ नहीं पाता है। यही कारण है कि बहि:चक्षु के अभाव में सूरदास भौतिक साधनों से युक्त सुख की अनुभूति करता रहता है और उसकी महत्वाकांक्षा दिन-प्रतिदिन बढ़ती जाती है जिसके कारण भौतिक जगत में उपलब्ध मायिक शक्तियां जीवात्मा को अपनी ओर मोहित करती हैं और उसके (मायिक शक्तियों के) वासस्थान इंद्रियों, मान और बुद्धि में जाकर स्थित हो जाती है। तभी तो श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है-

इन्द्रियाणि मनो बुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते।

एतैर्विमोहयत्येष ज्ञानमावृत्य देहिनम् ।।40।।*

अर्थात् ''इंद्रियां, मन और बुद्धि-ये सब इसके (भौतिक सुखों में) वासस्थान कहे जाते हैं। यह काम मन, बुद्धि और इंद्रियों के द्वारा ही ज्ञान को आच्छादित करके जीवात्मा को मोहित करता है।''

अंत:चक्षु- ज्ञान-प्राप्ति के पश्चात् जब भीतर की दृष्टि सत्-असत्, अच्छे-बुरे तथा सुंदर-असुंदर का निर्णय जिस अवयव के द्वारा करता है उसे अंत:चक्षु कहा जाता है। अन्त:चक्षु से परमतत्व, आत्मतत्वता आदि-आदि तत्वों का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। भगवान शिव का अन्त:चक्षु प्रकट है जबकि सामान्य जनों में भृकुटि के भीतर स्थित है जिसे जानने की जरूरत है। अंत:चक्षु जिसे ज्ञानचक्षु भी कहा जाता है वह अग्नि है जो संसार के सभी भौतिक सुख-संपदा रूपी ईंधन को जला देता है तब जाकर मनुष्य अपने-आप ही परमतत्व और आत्मतत्व को जान लेता है। श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है-

यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात्करूतेऽर्जुन।

ज्ञानाग्नि: सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरूते तथा ।।37।।*

अर्थात् हे अर्जुन! जैसे प्रज्ज्वलित अग्नि ईंधनों को भस्ममय कर देता है, वैसे ही ज्ञानरूप अग्नि संपूर्ण कर्मों को भस्ममय कर देता है।

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।

तत्स्वयं योगसंसिद्ध: कालेनात्मनि विन्दति ।।38।।**

अर्थात् इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र करने वाला नि:संदेह कुछ भी नहीं है। उस ज्ञान को कितने ही काल से कर्मयोग के द्वारा शुद्धांत:करण हुआ मनुष्य अपने-आप ही आत्मा में पा लेता है।

अंत:चक्षु का अर्थ ज्ञान एवं दिव्य दृष्टि से है। बचपन से लेकर प्रौढ़ावस्था तक गुरु बनकर कभी माँ तो कभी पिताजी तो कभी शिक्षकगण ज्ञान-ज्योति का प्रकाश हृदय में भेजकर अज्ञानरूपी अंधकार को समाप्त करने का प्रयास करते हैं। लेकिन हृदय में ज्योंहि अंत:चक्षु खुल जाते हैं त्योंही उसके हृदय के निर्मल नेत्र (दिव्य दृष्टि) खुल जाते हैं। इससे वह प्राणी ईश्वरीय तत्व या परम तत्व को उसी तरह निकट देखता है जैसे व्यक्ति अपने नेत्र को स्वयं दर्पण में देखता है। ईश्वरीय तत्व के परमतत्व का साक्षात्कार करना ही मनोविज्ञान है। मनोविज्ञान के द्वारा व्यक्ति के अचेतन मन में प्रत्यक्षतया परोक्ष रूप से स्थित सभी प्रकार के विकृतियों को दूर किया जाता है। व्यक्ति के अंदर स्थित सभी प्रकार की विकृतियों को दूर करके उसे जीने के लिए नवीन जीवन प्रदान किया जाता है। तभी तो गोस्वामी तुलसीदास जी ने 'रामचरितमानस' में लिखा है-

उधरहिं विमल बिलोचन ही के। मिटहिं दोष दुख भव रजनी के।।
सूझहिं राम चरित मनि मानिक। गुप्त प्रगट जहं जो जेहि खानिक।।4।।***

अर्थात् उसके हृदय में आते ही हृदय के निर्मल नेत्र खुल जाते हैं और संसाररूपी रात्रि के दोष-दु:ख मिट जाते हैं एवं श्रीरामचरितरूपी मणि और माणिक्य (ईश्वरीय तत्व), गुप्त और प्रकट जहाँ जो जिस खान में हैं, सब दिखायी पड़ने लगते हैं।

निष्कर्ष-सूरदास के नेत्र पर बाह्य रूप से एवं उसके अन्त:करण पर मनोविज्ञान का प्रभाव पड़ता है। गीता का प्रारंभ धृतराष्ट्र (जो स्वयं सूरदास थे) के पंक्ति/वाणी से हुआ है। गीता में सिर्फ मनोविज्ञान ही मनोविज्ञान है। अर्जुन उसका साक्षी या अध्ययनकर्ता है। गीता में श्रीकृष्ण ने कहा है कि कोई भी व्यक्ति इन बाह्य नेत्रों से मुझे (परमतत्व/ईश्वरीय तत्व) को नहीं देख सकता है। मुझे देखने के लिए अंत:चक्षु की आवश्यकता है। जो मैं तुझे प्रदान करता हूँ जिससे तु मुझे (ईश्वरीय तत्व/परमतत्व को) देख सके। गीता की निम्न पंक्ति बाह्य चक्षु और अन्त:चक्षु के बीच स्थित भेद या अंतर को पूर्ण रूप से स्पष्ट कर देती है। श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है-

न तु मां शक्यसे द्रष्टुमनेनैव स्वचक्षुषा।

दिव्यं ददामि ते चक्षु: पश्य में योगमैश्वरम् ।।8।।****

अर्थात् मुझको तू इन अपने प्राकृत नेत्रों द्वारा देखने में नि:संदेह समर्थ नहीं है, इसी से मैं तुझे दिव्य अर्थात् अलौकिक चक्षु (अन्त:चक्षु) देता हूँ, इससे तू मेरी ईश्वरीय योगशक्ति को देख।

मुहल्ला-पोखरा (वीमेंस कालेज के पश्चिम)
कचहरी रोड, हाजीपुर, वैशाली (बिहार)
पिन-844101
संपर्क:09204527041

*श्रीमद्भगवद्गीता/अध्याय-4/श्लोक37/पृष्ठ सं. 72
**श्रीमद्भगवद्गीता/अध्याय-4/श्लोक38/पृष्ठ सं. 72
***श्रीरामचरितमानस/बालकांड/दोहा-1/चौपाई 4/पृष्ठ सं.3
****श्रीमद्भगवद्गीता/अध्याय-11/श्लोक 8/पृष्ठ सं. 142

◆ लेख ◆

खुद पर भरोसा हो तो दुनिया आपकी

श्याम बाबू शर्मा

यह मेरे अपने स्वयं के अनुभव के आधार पर है और इससे मुझे शत-प्रतिशत लाभ मिला है, इसलिए मैं अपना अनुभव आपसे शेयर कर रहा हूं। खुद पर भरोसा करना यानी आत्मविश्वास होना, जीवन का आधार है और यह आधार डगमगाया तो आप खड़े कैसे रह पाएंगे? किसी में चाहे कितना भी बड़ा गुण हो, काबिलियत हो, यदि उसे खुद पर भरोसा नहीं है तो वह प्रकाश में नहीं आ सकता। गुमनामी की जिंदगी में जीता रहेगा। भीड़ का हिस्सा बनकर रह जाएगा। अपनी पहचान नहीं बना पाएगा।

आज मैं जो हूं, ऐसा पहले नहीं था। मुझमें भी आत्मविश्वास की बहुत कमी थी। विद्यार्थी जीवन के प्रारंभिक और मध्यतर दिनों में क्लास की सबसे पीछे वाली सीट पर बैठता था, ताकि अध्यापक मुझे खड़ा करके कुछ पूछ ना लें। ऐसा नहीं कि मैं पढ़ाई में कमजोर था, बल्कि मुझमें आत्मविश्वास की कमी थी। मैं भरी क्लास में खड़ा होकर कुछ भी बोलने में हिचकिचाता था। कभी स्कूल के किसी समारोह में हिस्सा नहीं लेता था। ऐसा नहीं कि मेरा मन ना करता हो, बल्कि मेरा भी मन करता था कि मैं भी अन्य सहपाठियों की तरह ही क्लास में खड़े होकर अपनी बात रखूं। उनकी तरह स्कूल की गतिविधियों में हिस्सा लूं। लेकिन मुझमें जो खुद पर भरोसा ना होने की भावना घर कर गई थी, वह मुझे आगे आने से रोकती थी।

आज जो लोग मुझे जानते हैं, उन्हें मालूम है कि आज मैं किसी भी मंच पर जाकर बिना हिचक बोल सकता हूं। उच्चाधिकारियों के समक्ष प्रस्तुतियां दे सकता हूं। लोगों की क्वैरियों का सामना बिना झिझक कर सकता हूं। शुरूआत में मंच पर चढ़ने में मेरी भी टांगे कांपती थी। गला सूखता था। सांस लेने में तकलीफ होती थी। पसीना आता था। लेकिन अब ऐसा कुछ नहीं है। शुरूआत में कुछ परेशानियां अवश्य आएंगी। कुछ लोग हतोत्साहित भी करेंगे। परंतु यदि आप खुद पर भरोसा रखते हैं तो दुनिया को जीत सकते हैं। यह आत्मविश्वास कैसे विकसित किया जा सकता है? अपने अनुभव के आधार पर आपको कुछ टिप्स देता हूं-

❖ अगर आप स्वयं को झेंपू समझते हैं और आप मानते हैं कि आपमें आत्मविश्वास की कमी है, जैसे कि आप लोगों के बीच बोल नहीं पाते, अपनी बात दृढ़ता से रख नहीं पाते, तो सबसे अच्छा यही है कि आप अपने दोस्तों के बीच, घर के सदस्यों के बीच इसकी शुरूआत करें। बिल्कुल भी ना डरें कि वे आपका मजाक उड़ाएंगे। घर के छोटे-मोटे कार्यक्रमों का संचालन करें। पूरी तैयारी के साथ अपना सौ प्रतिशत लगाएं। इससे धीरे-धीरे आपका आत्मविश्वास बढ़ेगा। इसके बाद आप दोस्तों की पार्टियों में, आफिस के कार्यक्रमों में सक्रिय रूप से भाग लें।

❖ घर, स्कूल, आफिस या यदि आप किसी सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक संस्था से जुड़े हैं तो उनकी गतिविधियों में बढ़चढ़ कर जिम्मेदारियां लें और पूरी तैयारी एवं जोश के साथ उस जिम्मेदारी को पूरा करें। इससे आपमें आत्मविश्वास की भावना पनपेगी और यही भावना एक दिन आपको शिखर पर पहुंचा देगी तथा आप लोकप्रिय हो सकेंगे।

❖ किसी भी जिम्मेदारी का वहन करने के लिए पूरी कार्ययोजना या रणनीति बनाएं। रफ-टफ से काम नहीं चलेगा। इस कार्ययोजना में कार्य के प्रकार एवं उसकी परिणति पर काम करें। यदि आप इसी ट्रैक पर आगे बढ़ेंगे तो आपको सही गलत का पता चलेगा कि इसका परिणाम क्या हो सकता है। इससे यह होगा कि आपमें आत्मविश्वास की वृद्धि होगी, खुद पर भरोसा जगेगा। अत: किसी काम को हाथ में लेने के बाद पूरी रणनीति के साथ उसे अंजाम तक पहुंचाएं।

❖ आत्मविश्वास का सबसे बड़ा दुश्मन नकारात्मक सोच है। अत: जितना हो सके उससे दूरी बनाए रखें। यदि आप नकारात्मक सोच के साथ किसी काम की कोई जिम्मेदारी लेते हैं तो आधी सफलता तो आपने पहले ही गवां दी। परिणामत: इससे आपका आत्मविश्वास और उत्साह दोनों पहले ही कम हो जाएगा। आपकी सकारात्मक सोच यह होनी चाहिए कि मैं यह काम अवश्य कर सकता हूं। इस सोच के साथ यदि आप उस

काम की जिम्मेदारी लेंगे तो काम अवश्य ही सफलतापूर्वक पूरा होगा।

❖ देखिए! कोई भी व्यक्ति परिपूर्ण नहीं होता उससे गलतियां हो सकती हैं। इसलिए गलती करने से ना डरें। जब एक बार गलत होगा तभी तो अगली बार सही होगा। मैंने कभी कई गलतियां की हैं या अभी भी हो जाती हैं। उसी अनुभव को सुधारकर उन्हें न्यूनतम स्तर पर लाने का प्रयास करता रहता हूं। मैं अपना एक अनुभव बताता हूं, इस रेलवे में उप मुख्य राजभाषा अधिकारी के रूप में श्री गुरचरण सिंह जी की पोस्टिंग हुई थी। वह काफी जीनियस थे। वे स्वयं एक अच्छे वक्ता, लेखक, कुशल प्रशासक और प्रेरक व्यक्ति थे। उन्होंने मुझे प्रेरणा देकर शुरूआत में कर्मचारी स्तर पर कंप्यूटर प्रशिक्षण देने का कार्य सौंपा। कई बार प्रशिक्षण के दौरान मेरी हूटिंग होती थी, जिससे मैं अपने को असहज महसूस करता था। परंतु उनकी प्रेरणा से अगली बार और अधिक तैयारी के साथ मैं प्रशिक्षण कार्यक्रम में प्रशिक्षक की भूमिका निभाता रहा। धीरे-धीरे मुझे खुद पर भरोसा होने लगा। आज की तारीख में सामने चाहे जिस भी स्तर का अधिकारी हो, मुझे कोई झिझक नहीं होती।

❖ हमेशा सही परिणाम की आशा बिल्कुल भी ना करें। कभी-कभी असहज स्थिति भी आ सकती है। परंतु आप बिना धैर्य खोए, पूरी तैयारी के साथ खुद पर भरोसा रखकर अपनी बात रखें। गलतियां इंसान ही करते हैं और आप भी इंसान हैं इसे सदैव अपने मन मस्तिष्क में रखें। गलतियों से सबक लें और उसे सुधारने का प्रयास करें। किसी ने कहा कि जो गिरते हैं वही बुलंदियों को छूते हैं।

❖ लोगों की अच्छी बातों, आदतों एवं व्यवहार का अनुसरण करें। बुरी बातें, आदतें एवं व्यवहार उनके पास ही छोड़ दें। इस बारे में मैं अपना अनुभव शेयर करना चाहूंगा। एक बार हमारे विभाग में एक ऐसे अधिकारी आए, जो पूरे स्टाफ की नजर में दुनिया के सबसे बुरे व्यक्ति थे। परंतु मेरे पिताजी मुझसे कहा करते थे कि दुनिया के सबसे बुरे इंसान में भी कुछ ना कुछ अच्छाई जरूर होती है, हमें उससे वही ग्रहण करना चाहिए। मुझे अपने पिताजी की वह सीख आज तक याद है। मैंने सबसे उसकी अच्छाई ग्रहण करता हूं और उसकी बुराई वहीं रहने देता हूं।

❖ समय के साथ खुद में बदलाव आवश्यक है। कूप-मंडूप बना व्यक्ति ना तो अपडेट रहता है और ना ही उसे वर्तमान परिस्थितियों या अवसरों का ज्ञान होता है। जो समय के साथ, परिस्थितियों के साथ खुद को नहीं बदलते, वे असफल हो जाते हैं, पिछड़ जाते हैं। आपको हर दिन कुछ न कुछ नया सीखने की इच्छा अपने अंदर पैदा करनी चाहिए। जैसे-जैसे हम नया सीखते जाते हैं, हमारा ज्ञान बढ़ता जाता है और हमारे अंदर आत्मविश्वास भी बढ़ता जाता है।

इस आत्मविश्वास को बढ़ाने के लिए नीचे कुछ अन्य टिप्स दे रहा हूं, इसका प्रयोग करें:-

• कभी भी बैक-बैंचर न बने, बल्कि फ्रंट सीट पर बैठने की आदत डालें।

• किसी से बात करते समय कभी भी नजरें ना चुराए बल्कि आंखों में आंखें डाल कर बात करें।

• लुंज-पुंज चाल से ना चलें, बल्कि अपनी सामान्य गति से कुछ अधिक गति से चलें, ताकि साथ चलने वाले व्यक्ति पीछे छूट जाएं और उन्हें आपकी बराबरी पर आने के लिए चलना नहीं बल्कि दौड़ना पड़े। आपने राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी को देखा होगा, वह जब चलते थे तो लोगों की भीड़ को उनके बराबर आने के लिए दौड़ना पड़ता था।

• किसी व्यक्ति से मिलते ही अपने चेहरे पर मुस्कान लाकर मिले। इससे आपका चेहरा आकर्षक लगेगा। मुरझाए चेहरे वाले व्यक्ति में आत्मविश्वास की कमी होती देखी गई है।

• बोलने की आदत विकसित करें। आफिस हो या घर-परिवार का धार्मिक, सांस्कृतिक समारोह या कोई अन्य समारोह, उसमें बढ़-चढ़कर अपनी भागीदारी सुनिश्चित कराएं। बोलने में आप अनाप-शनाप शब्दों का नहीं बल्कि सुसंस्कृत भाषा का प्रयोग करें।

अंत में, इतना ही कहूंगा कि यदि आपको खुद पर भरोसा है और आप पूरी तैयारी के साथ मैदान में उतरते हैं तो मैदान आपका, दुनिया आपकी होगी।

वरिष्ठ अनुवादक/मुख्यालय
पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर
संपर्क:9794840674

**अनुभव की पाठशाला में जो पाठ सीखे जाते हैं,
वे पुस्तकों और विश्वविद्यालयों में नहीं मिलते।**

कैसे करें आईटीआर ई-फाइलिंग

नागेश्वर नाथ श्रीवास्तव

ऑनलाइन आईटीआर फाइल करना काफी आसान हो गया है। इनकम टैक्स आयकर फाइल करने की अंतिम तिथि 31 जुलाई 2018 थी। इसके बाद रिटर्न फाइल करने पर अब जुर्माना लगेगा। इनकम टैक्स रिटर्न ऑनलाइन और ऑफलाइन दोनों ही तरीके से फाइल किए जा सकते हैं। आप वेबसाइट और एप्स की मदद भी ले सकते हैं। इनकम टैक्स को आनॅलाइन भरने की प्रक्रिया को ही ई-फाइलिंग कहा जाता है। कुछ स्टेप्स के जरिए आप घर बैठे ही ई-फाइलिंग कर सकते हैं-

1. ई-फाइलिंग के लिए आयकर विभाग की वेबसाइट Incometaxindiaefiling.gov.in पर खुद को रजिस्टर करना होगा। नए यूजर हैं तो 'रजिस्टर योरसेल्फ' का विकल्प दिखाई देगा। यहां क्लिक करने पर रजिस्ट्रेशन फार्म में सेलेक्ट यूजर टाइप में इंडिविजुअल/एच.यू.एफ. के अलावा कई दूसरे आप्शन भी आएंगे। आप जिस यूजर कैटेगरी में आते हैं उसपर क्लिक कर फार्म भर लें।

2. जब आप रजिस्टर करेंगे, तो एक ईमेल मिलेगा इसमें एक लिंक मिलेगा। लिंक ओपन करने के बाद यहां ओटीपी डालना होगा। आपके मोबाइल पर वन टाइम पासवर्ड और ईमेल के जरिए भेजे गए एक्टिवेशन लिंक पर क्लिक करने के बाद रजिस्ट्रेशन प्रकिया पूरी होगी। अगर आप पहले ही रजिस्टर्ड हैं तो रजिस्टर यूजर के आप्शन पर जाएं।

3. रजिस्ट्रेशन प्रकिया के बाद अब लॉगिन करें। पैन नंबर आपका यूजरनेम होगा और पैनकार्ड पर दी गई जन्मतिथि आपका पासवर्ड होगा। इसके बाद नया पेज खुल जाएगा। यहां पर प्रिपेयर एंड सबमिट ऑनलाइन आईटीआर (ऑनलाइन आईटीआर फाइल करने)के विकल्प को चुनना होगा। इसके बाद फार्म में सेलेक्ट करें कि आप किस साल का आईटीआर फाइल करने जा रहे हैं। नौकरी करने वाले लोगों को आईटीआर-1 फार्म सेलेक्ट करना होता है। वैसे फार्म भरने से पहले सामान्य दिशा-निर्देश को जरूर पढ़ लें। एक बार प्रिव्यू और सबमिट बटन पर क्लिक करें और फाइनल सबमिशन से पहले आपके ITR फार्म का प्रिव्यू खुलकर सामने आ जाएगा। अगर सब कुछ सही है तो उसे सबमिट कर दें।

4. आईटीआर अपलोड होने के बाद आपसे रिटर्न को वेरीफाई करने को कहा जाएगा। आपने डिजिटल सिग्नेचर रजिस्टर कर रखे हैं तो फाइनल आईटीआर सबमिट करते समय यही डिजिटल सिग्नेचर अपलोड के लिए पूछा जाएगा। एकबार अपलोड और सबमिट होने के बाद आईटीआर फाइल करने की प्रक्रिया पूरी हो जाती है और फिर किसी वेरिफिकेशन की जरूरत नहीं होती। रिटर्न के सफलतापूर्वक अपलोड होने के बाद एक रसीद आपके रजिस्टर्ड ईमेल आईडी पर भेज दी जाएगी। आपके द्वारा वेरीफाई किए जाने पर विभाग आपके आईटीआर की प्रक्रिया शुरू कर देगा।

कनिष्ठ अनुवादक/मुख्यालय
पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर

उद्यमेन ही सिद्धयंति कार्याणि न मनोरथैः।
न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशंति मुखे मृगाः॥

अर्थात् प्रयत्न करने से ही कार्य पूर्ण होते हैं, केवल इच्छा करने से नहीं,
सोते हुए सिंह के मुख में मृग स्वयं प्रवेश नहीं करते हैं,
उसे भी इस हेतु प्रयास करना पड़ता है।

◆ पुस्तक समीक्षा ◆

भीम प्रसाद की यथार्थपरक कहानियां और अनूठे निबंध

कृष्ण गोपाल श्रीवास्तव

कवि-कथाकार भीम प्रसाद प्रजापति ने काव्य-संग्रह 'मैं भारत हूँ' के पश्चात् बहुत ही उमंग और उत्साह के साथ दूसरा संग्रह 'दूसरा भारत' के नाम से पाठकों की सेवा में प्रस्तुत कर दिया है। इस संग्रह में उनकी 09 कहानियां और 07 निबंध संग्रहित हैं, ये सभी रचनाएं यथार्थपरक और अनूठी हैं। भीम प्रसाद की राष्ट्रवादी जिजीविषा और 'दूसरा भारत' संग्रह की रचनाएं सराहनीय हैं।

भीम प्रसाद प्रजापति स्वभाव से कवि हैं। उनकी कहानियों में किसी तिलस्मी और दार्शनिक भंगिमाओं से भरी फैंटसी को तलाश करने वालों को प्राय: निराश होना पड़ेगा। उनकी कहानियां पाठक से सीधे संवाद करती हैं। सादगी और स्वाभाविकता इन कहानियों का सहज गुण है। भीम प्रसाद का कवि स्वभाव साहित्य संसार की विभिन्न गलियों में आन-बान-शान के साथ आवा-जाही करने में कोई संकोच नहीं करता। कहानीकार और निबंधकार के रूप में भीम प्रसाद प्रजापति अपने कवि-स्वभाव के साथ मौजूद रहते हैं।

प्राय: देखा गया है कि एक काव्य सर्जक अपने युग से लेकर विशेष लगाव रखता है। कवि-कथाकार भीम भी अपने कवि के साथ गद्य लेखन में भी मौजूद रहते हैं। छायावादी युग से लेकर वर्तमान दौर के हर साहित्यकार की यह पूंजी रही है। इसी क्रम में भीम प्रसाद भी अपने काव्य, कथा और निबंध के साथ पूरे जलाल में दिखाई पड़ते हैं।

'दूसरा भारत' में प्रस्तुत भीम प्रसाद प्रजापति के ये सातों निबंध उनके समय, समाज और परिवेश के शानदार दस्तावेज हैं। इनमें है न कोई पहेली और न किसी भी तरह का लतीफा। संजीदगी भरी सोच और भाषा है भीम के इन निबंधों की। बस, आज के दौर को देखा और नये संवाद-विन्यास के साथ पाठकों की सेवा में रख दिया। पत्ते पर पानी, दूसरा भारत, अभिभावक पर भरोसा करें, काहिल होता देश, सब कुछ रह जायेगा, अंतर कहां तथा भ्रष्टाचार बिगाड़ देता है अच्छे-अच्छों को...ये सभी निबंध रोचक तथा एक ही बैठक में पढ़े जा सकने योग्य हैं।

भीम प्रसाद प्रजापति के लेखन की सबसे बड़ी बात यह है कि इनकी ये सारी कहानियां निहायत ही सच्ची हैं। आंखों देखी और यथार्थ से पूरित हैं भीम प्रसाद प्रजापति के 'दूसरा भारत' की सभी नौ कहानियां। इन कहानियों में गांव हैं और शहर भी। 'सरपुतिया' में गांव के एक किसान की सच्चाई, ईमानदारी और सरलता के दर्शन होते हैं, तो 'चलबिधरी' में गांव की मजदूर पत्नी की आप-बीती है। लोभ, पश्चाताप, भाभी, प्रतीक्षा, क्लासमेट जैसी कहानियां समाज के लिए शिक्षाप्रद हैं तो समाज के लिए मनोरंजक और उपयोगी।

निबंधों से स्पष्ट है भीम प्रसाद की सोच अत्यंत प्रशंसनीय और समाज के लिए हितकारी है। इनमें दलित-चेतना, स्त्री विमर्श, आंचलिक परिवेश की यथार्थपरकता और लोक-जीवन सहज ही उपस्थित है और रोचकता के साथ। सामाजिक कुरीति पर प्रहार और मानवीय राग-चेतना के संरक्षण का यत्न करती इन कहानियों में विचार से कहीं ज्यादा जोर, जीवन-दृष्टि की गहनता पर दिया गया है।

'दूसरा भारत' संग्रह के निबंधों में समय-समाज में व्याप्त धर्म, पाखंड, सांप्रदायिकता, मानवीय संवेदना के ह्रास, नैतिक पतन, जातीयता की विष-बेल पर व्यापक चर्चा की गयी है। पाठकों के बुद्धि कौशल को परिमार्जित करने के लिए कई प्रश्न अनुत्तरित छोड़ दिये गये हैं। कहना न होगा कि संग्रह की रचनाएं रचनाकार भीम प्रसाद की वृहत्तर संवेदना परिधि का परिचायक हैं। संग्रह 'दूसरा भारत' को 'नीलकमल प्रकाशन' (गोरखपुर) ने प्रकाशित किया है। मूल्य लगभग ढाई सौ रुपये मात्र है। पृष्ठ संख्या 110 है।

वरिष्ठ उप संपादक 'आज'
बैंक रोड, गोरखपुर
संपर्क:9532947807

◆ कविता ◆

तरीक़ा बचाव का

बी.आर. विप्लवी

हों हादसे न, ध्यान हो जो रख-रखाव का
बस एहतियात ही है तरीक़ा बचाव का

देते नहीं है ध्यान जो छोटे रिसाव का
नासूर बना देते हैं मामूली घाव का

चढ़कर नदी के सीने पर इतरा रहा है पुल
पायों को है एहसास नदी के दबाव का

बरसात ज़रूरी है मगर एक हद के बाद
बनती है सबब वो किसी गहरे कटाव का

मोहलत भी ज़रूरी है जो रफ़्तार तेज़ हो
काफ़ूर वरना होगा नशा सब चढ़ाव का

अपनी कमी का ठीकरा औरों पे फोड़ कर
कमज़र्फ*खड़ा करते हैं मंज़र तनाव का

करते हैं अपने काम को पूजा समझ के जो
मौका नहीं है उनको किसी राव-चाव का

लाज़िम खटर-पटर है बदलती फज़ा**के संग
यह रेल का सफ़र है नदी बीच नाव का

कांटों पे है दारोमदार आमद-रफ़्त का
पुख़्ता हो इंतज़ाम स्विचों के सटाव का

लगता है पता जांच-निरीक्षण के बाद ही
क्रॉसिंग की दशा ज़ोर 'नोज' के घिसाव का

हों पहिए-धुरे, ब्रेक, कोच-वैंगनों के ठीक
हों डोर लाक, ध्यान हो समुचित लदाव का

स्काडा, अर्थ, ट्रैक-बांड और सब-स्टेशन
ट्रेक्शन हो मानकीय हर पेंटो-जुड़ाव का

फेल्योर में बेसब्रियां उज़्लत# है खुदकुशी
है शार्टकट सहारा झूठ के बचाव का

फुटप्लेट में, पुश ट्राली में खुलता है कई राज़
सिग्नल की ख़राबी का, ट्रैक के धंसाव का

पूरी हो फिटिंग ट्रैक की, स्लीपर दुरुस्त हों,
फिर भी है ध्यान रखना रेल के कसाव का

जो ट्रैक की गोलाई पर रखते नहीं नज़र
वे अहमियत क्या समझें ट्रैक के झुकाव का

स्टेशनों के अमले गार्ड, ड्राइवर सभी
रहकर सचेत काम करें हर स्वभाव का

हर हाल में हो क़ायदे-क़ानून का पालन
क्या फ़ायदा है वरना मुफ़्त के सुझाव का

किरदार 'विप्लवी' का उसूलों पे अटल था
जब ज़िंदगी को समझा मुसाफिर पड़ाव का

---

*कम क्षमता वाला **वातावरण #ज़ल्दबाज़ी

मुख्य संरक्षा अधिकारी
पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर
संपर्क:9794840901

◆ कविता ◆

हिंदी से आज हिंदुस्तान मिलने है चला

ए.पी. पाण्डेय

एक बार सुन अंग्रेजी, हिंदुस्तान की
एक विदेशी तारीफ में बोला
अंग्रेजी, आपकी अंग्रेजी की अंग्रेजी से भी है बेहतर
लगता है अंग्रेजी के तालीम का अच्छा था स्तर
आपकी मातृभाषा हिंदी ने क्या खराब की करनी
देख प्रचलन, अंग्रेजी लगती है हिंदी की जननी
सुन विदेशी के मुख ऐसा व्यंग्य
हिंदुस्तान का हृदय रह गया दंग
लज्जित हुआ हिंदुस्तान,
कि क्यूं उसने हिंदी को है छला
हिंदुस्तान हिंदी से मिलने चला
कई गिले शिकवे थे बहुत दिनों से
हिंदी का न था कोई मेला
शहरों में, महलों, मोहल्लों में कई जगहों पर टटोला
गलियों चौराहों पर अलापा हिंदी का राग
पर न मिल सका कहीं हिंदी का कोई सुराग
एक हृदय रूपी भव्य महल
जिसमें कभी हिंदी थी बसी
अब उसमें अंग्रेजी शान के साथ थी सजी
हिंदुस्तान सोचा चलो
अंग्रेजी से ही पूछ लेते हैं हिंदी का हाल
अंग्रेजी बोली शहर से दूर
भाषायी गँवारों का है एक डेरा
हर जगह से तिरस्कृत हो थक हार कर
हिंदी ने वही किया है बसेरा
संपन्नता से कंगाली तक, राजत्व से बदहाली तक
ऐसी दुरूह स्थिति में, उस घनी बस्ती में
देख हिंदी को संतुष्ट, हिन्दुस्तान था हैरान
मुख पर आश्चर्यभाव देख हिंदी बोली
तिरस्कृत होने से नहीं हूँ मैं आहत
मैं तो भाषा हूँ मुझे आश्रय नहीं बस सम्मान चाहिए
नवयुवकों के हृदय में संस्कृति पर गर्व का भान चाहिए
हर चीज हमेशा मूल्य के तराजू में तौली नहीं जाती है
सबसे छोटे बटखरे से भी हल्की परंपराएं, पूरी संस्कृति
पर भारी पड़ जाती हैं।
नि:संदेह हिंदी आजीविका में सहायक नहीं है बन पाती
पर हिंदी भाषा व्यक्तित्व का
अत्यंत बहुमूल्य 'सेल्फ इमेज' है बनाती
न है मुझे भारत के लालों से कोई मलाल
माँ-बाप को जो आश्रय नहीं दे पाते,
वो मुझे क्या शह दे पायेंगे
वो समय दूर नहीं
लोग माँ-बाप को देखने वृद्धाश्रम और मुझसे मिलने
लाइब्रेरी नामक जू (चिड़ियाघर) में आयेंगे।

उप मुख्य संरक्षा अधिकारी/यांत्रिक एवं
उप मुख्य राजभाषा अधिकारी
पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर



इस करुणा-कलित हृदय में, अब विकल रागिनी बजती।
क्यों हाहाकार स्वरों में, वेदना असीम गरजती?
मानस सागर के तट पर, क्यों लोल लहर की घातें।
कल-कल ध्वनि से हैं कहती, कुछ विस्मृत बीती बातें?

जयशंकर प्रसाद

◆ दो गजलें ◆

सैयद मुहम्मद असलम

एक

सोच में गुम अदीब बैठे हैं,
जैसे कुछ बदनसीब बैठे हैं।

नौकरी पा गये धनी जो थे–
पर बिचारे गरीब बैठे हैं।

लूटने में कमी नहीं करते
वैसे बनकर हबीब बैठे हैं।

मुल्क पर अपने घात में कितनी
मुद्दतों से रकीब बैठे हैं।

साफगोई मेरी सुनो क्या, बस
गढ़ के मेरी सलीब बैठे हैं।

आप दिल के वजूद में कब से
'असलम' धड़कनों के करीब बैठें हैं।

दो

जमीं देती है पर भूखे मरे हैं,
यहीं पर ही परिंदों के बंधे हैं।

सितम सह कर भी ये चुप ही खड़े हैं,
ये पुतले कैसी मिट्टी के बने हैं?

उन्हीं की रूह से रौशन है दुनिया,
जो औरों के लिए जिंदा रहे हैं।

वतन के बारे में कुछ सोच तू भी–
शहादत के अगर चर्चे सुने हैं।

तू रौशन कर ले सब ख्वाबों के दीपक
गजल पढ़ने को अब 'असलम' उठे हैं।

मुख्य कार्यालय अधीक्षक
सांख्यिकी विभाग
पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर
संपर्क:9598951551



**पंथ होने दो अपरिचित
प्राण रहने दो अकेला!**

**और होंगे चरण हारे,
अन्य हैं जो लौटते दे शूल को संकल्प सारे,
दुखव्रती निर्माण-उन्मद
यह अमरता नापते पद,
बाँध देंगे अंक-संसृति से तिमिर में स्वर्ण बेला!**

महादेवी वर्मा

◆ कविता ◆

ग्लानि

दीक्षा

आज मैंने भी देखा उसे,
बैठी थी वो सड़क के किनारे...
ना जाने क्या देख रही थी,
उस सूखी सी घास में
आज पेट भर जाये शायद,
बैठी रही किसी उम्मीद के सहारे...
हाँ आज मैंने भी देखा उसे,
मौन रह गई मैं भी
उन्हीं लोगों की तरह
जो हर रोज उसे देखते होंगे
अनदेखा कर आगे बढ़ जाते होंगे
मैंने भी तो वही किया
देखा उसे और बढ़ गई आगे
चलती चली गई मैं अपनी राह पे,
पर अब क्यूँ बेचैन हूँ...
अब क्यूँ परेशान हूँ...
ग्लानि क्यूँ है मन में
अपने किये पर शर्मशार हूँ
हाँ नहीं हूँ मैं भी महान
मैं भी हूँ उन सबकी तरह बेजान
जो इंसान होकर भी इंसान नहीं
जो मात्र शरीर है उनमें जान नहीं!

प्रशिक्षु अध्यापिका
सत्यानंद उच्च शिक्षा संस्थान
लखनऊ

◆ कविता ◆

शमा बुझने को है

घनश्याम आई.काने

रो मत दिल,
शमा बुझने को है।
दिल टूट गया,
कहना जीने को है।
सोचा था मैं, मिलेगी बेइंतहां खुशी,
ये सब बात कहने को है।
रो मत दिल,
शमा बुझने को है।
ऐ घनश्याम तू रोता है क्यूं,
रूह निकल गई,
लाश जलने को है।
शमा बुझने को है।

लिपिक/परिचालन अनुभाग
प्रमुयांइं कार्यालय,
पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर

गलतियां सुधारने का अवसर जीवन में अवश्य मिलता है।

◆ दो कविताएं ◆

प्रमोद लायटू

दशहरा

मेला लेकर आया दशहरा।।
देखीं कितनी राम लीलाएं,
पढ़ी हैं कितनी राम कथाएं।
त्रेता के राजा दशरथ की
बोलो कौन सी कथा सुनाएं।।
असत्य पराजित हुआ सदा ही,
नहीं सत्य के सम्मुख ठहरा।।
रामचरितमानस 'तुलसी' की
वाल्मिकी की हो रामायण।
वे जन निर्मल मन होते हैं,
जो करते इनका पारायण।।
भक्ति रंग में जो रम जाते,
प्रभु से उनका नाता गहरा।।
दशहरे का पर्व सुपावन
विजयादशमी है कहलाता।
अहंकार रावण का इस दिन
चूर-चूर होकर जल जाता।।
अवगुण पर होते गुण भारी,
तम पर सदा प्रकाश का पहरा
मेला लेकर आया दशहरा।।

सर्दी आई

बीती वर्षा-सर्दी आई,
खुलने लगे लिहाफ-रजाई।

लगे कंपकपी-जाड़ा-ठिठुरन,
अंग-अंग में जैसे सिहरन।

सूरज की हर किरन लुभाती,
तन-मन को है धूप सुहाती।

सेव-नारंगी-मूली-गाजर,
जी भर खाओ खूब टमाटर।

सुबह-सुबह उठते जो बच्चे,
सबको लगते हैं वे अच्छे।

बच्चों कभी न आलस करना,
सर्दी-गर्मी से क्या डरना।

'कृष्ण जगत'
48 एफ, पॉकेट-4
मयूर विहार-1
दिल्ली-110091
संपर्क:09811253850

जलाबिंदुनिपातेन क्रमशः पूर्यते घटः।
स हेतुः सर्वविद्यानां धर्मस्य च धनस्य च।।

जैसे बूँद-बूँद जल गिरने पर एक दिन घड़ा पूरी तरह भर जाता है,
उसी तरह धीरे-धीरे करते हुए मनुष्य की विद्या,
धर्म व धन का संचय भी बढ़ जाता है।

◆ दो कविताएं ◆

किरन श्रीवास्तव

ये वृक्ष

सुदूर रास्तों पर खड़े
धूप में भी रहे अड़े
मरे नहीं, झुलस गए
प्रकृति की मार से
बर्फ की बौछार से
ये वृक्ष।

हर पल संघर्ष किया
तूफाँ भी रीत गया
टूटे नहीं, फलते रहे
राही की छांव बने
दोनों की ठांव बने
ये वृक्ष।

सांसों की डोर संभाले
गहन शीत के बीच
हारे नहीं, अनुशासित से
रग रग में जीवन भरते
सूरज की राह तकते
ये वृक्ष।

संकट से लोहा लेकर
लक्ष्य पर अडिग रहे,
पथ-कंटक मिट जाएगा
मग मंजिल तक ले जाएगा
सीख नवजीवन की दे रहे
ये वृक्ष।

(कितनी भी विषम परिस्थिति हो, मनुष्य को साहस नहीं छोड़ना चाहिए। आशा और विश्वास नवजीवन की राह दिखाते हैं। जैसे कि ये वृक्ष हरियाली की प्रतीक्षा में घनी बर्फ के बीच भी खड़े तो हैं।)

मन का सूरज

हर भोर एक आमंत्रण है
कब आशाओं की रश्मियां भेद
गहन अंधेरों को चीर
जीवन की सांवली रात से
उगा दे
मन के मौसम का चमकीला सूरज

हर भोर एक आमंत्रण है
जीवन की बुझती राख से
उठती चिंगारियों के
अलख फूल
कब जगा जाये
मन के मौसम का छबीला सूरज

हर भोर एक आमंत्रण है
हर सपने के द्वारा की आहट का
कब कर्म की परिभाषा
हर असफलता को चीर
लिख दे विजय का गीत
और जाग जाये
मन के मौसम का हठीला सूरज

(बाहरी सांझ भोर से कुछ अलग होता है मन का मौसम। रात कितनी भी गहन हो हर रात की सुबह होती है किंतु कौन सा पल कब मन का सूरज जगा दे और उसे एक नई भोर की ओर ले जाए जिसके आगे जीत ही जीत हो।)

जी-2/105
रेल विहार प्रथम,
गोरखपुर

बुराई के साथ असहयोग करना हमारा पवित्र कर्तव्य है।

◆ कविता ◆

नयी सदी का भूखा

रामाश्रय यादव

उसने अपने दोनों पांवों को
पहले तो कीचड़ में साना
फिर स्वयं को नये जूते पहने माना
इसके बाद नीम के
दरख्त के समीप बने
चबूतरे पर लेट गया।
कहने लगा-
आ गये हैं मेरे अच्छे दिन!
पहन लिये हैं मैंने
नये-नये कपड़े...?
हाथों में बना लिया
एक आयताकार घेरा
फिर बोला-
यही तो है घर मेरा!
चोरी का डर नहीं
किसी तरह का कोई कर नहीं
नींव भी मजबूत है
और इस बात का सबूत है
कि आंधी या तूफान
हिला नहीं सकते
मेरे इस मकान को!
मेहमान भी मेरे
आ सकते हैं
किसी भी दिशा से
कुछ देर बाद
वह वहीं धूप में सो गया
पता नहीं किस सपने में मस्त हो गया
जैसे ही वह जागा,
मैंने एक सवाल दागा-
भइये, जब आप सोये हुए थे
किसके सपने में खोये हुए थे?
लगता है आपको
आ रहा था खूब मजा!
नयी सदी का वह युवा बोला-
'साहब,
मैं तो हूँ एक शिक्षित बेरोजगार
बहुत दिनों बाद आज मैं
खा रहा था सपने में रोटियां!'
मित्रों,
वह बेरोजगार युवा खुश था इतना
कि खुशी की हद से जैसे गुजर गया,
नयी सदी में उसने देख ली थी-
सपने में रोटी
इसके बाद वह इसी खुशी में मर गया।
हमें यह कविता लिखने पर
मजबूर कर गया।

अध्यक्ष,
उत्तर प्रदेश कुश्ती संघ,
बंगला नं.-55/बी
कौवा बाग रेलवे कालोनी, गोरखपुर
संपर्क:9532520569

योसन्नयस्तकर्माणं ज्ञानसंछिन्नसंशयम्।
आत्मवन्तं न कर्माणि निबंधान्ति धनंजय।।
हे धनंजय! योग के द्वारा जिसका समस्त कर्म बंधनों से विच्छेद हो गया है और विवेक द्वारा समस्त संशयों का नाश हो गया है ऐसा पुरुष कर्म से नहीं बंधता।

◆ दो गजलें ◆

मुकेश प्रधान

एक

तंग गलियों से मिलकर एक चौराहा मिला,
बदहवासी थीं वहां सहमा हुआ जलसा मिला।।

हाथ में खंजर थे उनके भीड़ थी उन्माद था,
दूर तक नजरें गयी तो इक डरा चेहरा मिला।।

हम कहां जाएं नहीं दिखता है कोई रास्ता,
सोचता हूं रह के जन्नत में हमें ये क्या मिला।।

कल लगायी आग जिसने इस शहर में देखिए,
उसका घर भी खाक है वह आज संजीदा मिला।।

आपको जो कुछ मिला वह आपका सत्कर्म है,
मेरी बातें छोड़िए मुझको तो बस धोखा मिला।।

दो

जी करता है हम भी शामिल हो जाएं बंजारों में,
इधर-उधर घूमें बहलायें दिल को चांद-सितारों में।।

शीशे जैसा टूट-टूट कर मिट्टी में मिल जाना है,
फिर क्यों शामिल होने जाएं, शहर के इज्जतदारों में।।

तुमने मुझको भुला दिया इस बात का शिकवा क्यूं पालें,
भूल गये जब अपनी दुनिया क्या रखा है यारों में।।

तेरे दामन में खुशियां हैं मुझको अपना गम प्यारा,
अब तो मैं खोया हूं यारों, अपने गहन विचारों में।।

चलते-चलते बहुत चले हैं थक कर चूर हुए अब हम,
मेरा नाम भी चाहो तो लिख लो किस्मत के मारों में।।

कार्यालय अधीक्षक
प्रमुपरिप्र कार्यालय
पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर
संपर्क:9336413985

लेखकों/रचनाकारों से निवेदन

'रेल रश्मि' में प्रकाशनार्थ रेल से संबंधित तकनीकी, गैर-तकनीकी, लेख, कहानी, कविता, गजल, संस्मरण, यात्रा-वृतांत, योग, अध्यात्म आदि अनेकानेक विधाओं/विषयों पर स्तरीय रचनाएँ आमंत्रित की जाती हैं। रचनाओं पर उचित मानदेय देने की भी व्यवस्था है। कृपया नोट करें कि रचनाएँ टाइप की हुई अथवा कंप्यूटर के माध्यम से स्वच्छ टंकित की हुई हो। हस्तलिखित रचनाएँ स्वीकार्य नहीं होंगी। रचना हार्ड कापी के साथ सी.डी./पेन ड्राइव के द्वारा ही दी जा सकती है। रचना कागज के एक ही ओर दोनों तरफ पर्याप्त हाशिया छोड़ कर लिखें और दो पंक्तियों के बीच पर्याप्त स्थान अवश्य छोड़ें। रचना स्पष्ट और सुपाठ्य हो। रचना को भेजने से पूर्व एक बार पढ़कर अवश्य शुद्ध कर लें और मूल प्रति ही भेजें। रचनाओं के साथ इस आशय का प्रमाण/घोषणा पत्र भी होना चाहिए कि यह लेख/रचना लेखक/रचनाकार की मौलिक कृति है और यह इससे पहले प्रकाशित नहीं हुई है। रचना के साथ पता, पिन कोड संख्या व संपर्क नंबर अवश्य उद्धृत करें।

कई रचनाएँ एक साथ न भेजें। साथ ही रचना दो से तीन फुल स्केप के आकार के पृष्ठों से अधिक न हो। यदि किसी कारणवश किसी रचना को पत्रिका में शामिल करना संभव न हुआ तो उसे लौटाया नहीं जाएगा। रचनाएँ निम्न पते पर भी भेज सकते हैं-

संपादक, रेल रश्मि
केंद्रीय हिंदी अनुभाग
मुकाधि कार्यालय, पूर्वोत्तर रेलवे, गारेखपुर-273012
ईमेल-seniorol9@gmail.com

◆ कविता ◆

परिश्रम

संजय प्रसाद

सफलता की एकमात्र कुंजी परिश्रम है,
परिश्रमी ही समृद्ध और संपन्न है,
करें परिश्रम, जब तक यह जीवन है,
अभी का काम अभी करें,
यही सफलता का लक्षण है।

मत भूलें कि महत्वपूर्ण प्रत्येक क्षण है,
बड़े भाग्य से मिला यह मानव तन है,
कुछ कर दिखाने के लिये हुआ यह जन्म है,
मंजिल का रास्ता नसीब नहीं, परिश्रम है,
मनुष्य अपना भाग्य-निर्माता स्वंय है।

सपना पूरा करने हेतु जरूरी संकल्प है,
कड़ा परिश्रम ही एकमात्र विकल्प है,
अगर कठोर परिश्रम का किया सृजन है,
आपमें अपने लक्ष्य प्राप्ति का लगन है,
तब देखें आप पर ईश्वर भी प्रसन्न है।

इतना जानें, सब कुछ का जड़ यह मन है,
कोई कार्य असंभव, यह एक भ्रम है,
अपनी ताकत को पहचाने, आप पूरी तरह सक्षम हैं,
लड़े जीवन में, जितना आपमें दम है,
क्योंकि संघर्ष ही जीवन है।

कार्यालय अधीक्षक
अनुरक्षण अनुभाग
प्रमुयाइं कार्यालय
पूर्वोत्तर रेलवे, गोरखपुर

फलों के आने से वृक्ष झुक जाते हैं,
वर्षा के समय बादल झुक जाते हैं,
संपत्ति के समय सज्जन भी नम्र होते हैं।
परोपकारियों का स्वभाव ही ऐसा होता है।

गोस्वामी तुलसीदास

राजभाषा संबंधी सांविधानिक उपबंध

संघ की राजभाषा नीति

भारत का संविधान-भाग 5 (120), भाग 6 (210) और भाग-17

भाग-5

संसद में प्रयुक्त होने वाली भाषा

120(1) भाग-17 में किसी बात के होते हुए भी, किंतु अनुच्छेद 348 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, संसद में कार्य हिंदी में या अंग्रेजी में किया जाएगा;

परंतु, यथास्थिति, राज्य सभा का सभापति या लोक सभा का अध्यक्ष अथवा उस रूप में कार्य करने वाला व्यक्ति किसी सदस्य को, जो हिंदी या अंग्रेजी में अपनी पर्याप्त अभिव्यक्ति नहीं कर सकता है, अपनी मातृ-भाषा में सदन को संबोधित करने की अनुज्ञा दे सकेगा।

(2) जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंधन करे तब तक इस संविधान के प्रारंभ से 15 वर्ष की अवधि की समाप्ति के पश्चात् यह अनुच्छेद ऐसे प्रभावी होगा मानो 'या अंग्रेजी में' शब्दों का उसमें से लोप कर दिया गया हो।

भाग-6

विधान-मंडल में प्रयुक्त होने वाली भाषा

210(1) भाग-17 में किसी बात के होते हुए भी, किंतु अनुच्छेद 348 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राज्य के विधान-मंडल में कार्य राज्य की राजभाषा या राजभाषाओं में या हिंदी में या अंग्रेजी में किया जाएगा;

परंतु, यथास्थिति, विधान सभा का अध्यक्ष या विधान परिषद् का सभापति अथवा उस रूप में कार्य करने वाला व्यक्ति किसी सदस्य को, जो पूर्वोक्त भाषाओं में से किसी में अपनी पर्याप्त अभिव्यक्ति नहीं कर सकता है, अपनी मातृ-भाषा में सदन को संबोधित करने की अनुज्ञा दे सकेगा। (यह अनुच्छेद जम्मू-कश्मीर पर लागू नहीं है)

(2) जब तक राज्य का विधान-मंडल विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक इस संविधान के प्रारंभ से 15 वर्ष की अवधि की समाप्ति के पश्चात् यह अनुच्छेद ऐसे प्रभावी होगा मानो या अंग्रेजी में शब्दों का उसमें से लोप कर दिया गया हो।

'परंतु हिमांचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय और त्रिपुरा राज्यों के विधान मंडलों के संबंध में यह खंड इस प्रकार प्रभावी होगा मानो इसमें आने वाले 'पन्द्रह वर्ष' शब्दों के स्थान पर 'पच्चीस वर्ष' शब्द रख दिए गए हों।'

भाग-17*

संघ की भाषा

संघ की राजभाषा

343(1) संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी। संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाले अंकों का रूप भारतीय अंकों का अन्तर्राष्ट्रीय रूप होगा।

(2) खंड (1) में किसी बात के होते हुए भी, इस संविधान के प्रारंभ से पन्द्रह वर्ष की अवधि तक संघ के उन सभी शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा जिनके लिए उसका ऐसे प्रारंभ से ठीक पहले प्रयोग किया जा रहा था :

परंतु राष्ट्रपति उक्त अवधि के दौरान, आदेश द्वारा, संघ के शासकीय प्रयोजनों में से किसी के लिए अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिंदी भाषा का और भारतीय अंकों के अन्तर्राष्ट्रीय रूप के अतिरिक्त देवनागरी रूप का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगा।

(3) इस अनुच्छेद में किसी बात के होते हुए भी, संसद उक्त पन्द्रह वर्ष की अवधि के पश्चात् विधि द्वारा

(क) अंग्रेजी भाषा का, या

(ख) अंकों के देवनागरी रूप का, ऐसे प्रयोजनों के लिए प्रयोग उपबंधित कर सकेगी जो ऐसी विधि में विनिर्दिष्ट किए जाएं।

राजभाषा के संबंध में आयोग और संसद की समिति

344(1) राष्ट्रपति, इस संविधान के प्रारंभ से पांच वर्ष की समाप्ति पर और तत्पश्चात् ऐसे प्रारंभ से दस वर्ष की समाप्ति पर, आदेश द्वारा एक आयोग गठित करेगा जो एक अध्यक्ष और

* इस भाग के उपबन्ध जम्मू और कश्मीर राज्य को केवल वहीं तक लागू होंगे जहां तक कि वे:
(i) संघ की राजभाषा
(ii) एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच अथवा किसी राज्य और संघ के बीच संचार की राजभाषा, और
(iii) उच्चतम न्यायालय में कार्यवाहियों की भाषा से संबंधित है।

आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट विभिन्न भाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले ऐसे अन्य सदस्यों से मिलकर बनेगा जिनको राष्ट्रपति नियुक्त करें और आदेश में आयोग द्वारा अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया परिनिश्चित की जाएगी।

(2) आयोग का यह कर्तव्य होगा कि वह राष्ट्रपति को-

(क) संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए हिंदी भाषा के अधिकाधिक प्रयोग,

(ख) संघ के सभी या किन्हीं शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा के प्रयोग पर निर्बन्धनों,

(ग) अनुच्छेद 348 में उल्लिखित सभी या किन्हीं प्रयोजनों के लिए प्रयोग किए जाने वाले अंकों के रूप,

(घ) संघ की राजभाषा तथा संघ और किसी राज्य की बीच या एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच पत्रादि की भाषा और उनके प्रयोग के संबंध में राष्ट्रपति द्वारा आयोग को निर्देशित किए गए किसी अन्य विषय, के बारे में सिफारिश करे।

(3) खंड (2) के अधीन अपनी सिफारिशें करने में, आयोग भारत की औद्योगिक, सांस्कृतिक और वैज्ञानिक उन्नति का और लोक सेवाओं के संबंध में अहिंदी भाषी क्षेत्रों के व्यक्तियों के न्यायसंगत दावों और हितों का सम्यक् ध्यान रखेगा।

(4) एक समिति गठित की जाएगी जो तीस सदस्यों से मिलकर बनेगी जिनमें से बीस लोक सभा के सदस्य होंगे और दस राज्य सभा के सदस्य होंगे जो क्रमश: लोक सभा के सदस्यों और राज्य सभा के सदस्यों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा निर्वाचित होंगे।

(5) समिति का यह कर्तव्य होगा कि वह खण्ड (1) के अधीन गठित आयोग की सिफारिशों की परीक्षा करे और राष्ट्रपति को उन पर अपनी राय के बारे में प्रतिवेदन दे।

(6) अनुच्छेद 343 में किसी बात के होते हुए भी, राष्ट्रपति खंड (5) में निर्दिष्ट प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात् उस सम्पूर्ण प्रतिवेदन के या उसके किसी भाग के अनुसार निदेश दे सकेगा।

प्रादेशिक भाषाएं

राज्य की राजभाषा या राजभाषाएं

345. अनुच्छेद 346 और अनुच्छेद 347 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, किसी राज्य का विधान-मंडल विधि द्वारा, उस राज्य में प्रयोग होने वाली भाषाओं में से किसी एक या अधिक भाषाओं को या हिंदी को उस राज्य के सभी या किन्हीं शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा या भाषाओं के रूप में अंगीकार कर सकेगा,

परंतु जब तक राज्य का विधान-मंडल, विधि द्वारा, अन्यथा उपबंध न करे तब तक राज्य के भीतर उन शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा जिनके लिए उसका इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले किया जा रहा था।

एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच या किसी राज्य और संघ के बीच पत्रादि की राजभाषा

346. संघ में शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग किए जाने के लिए तत्समय प्राधिकृत भाषा, एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच तथा किसी राज्य और संघ के बीच पत्रादि की राजभाषा होगी;

परंतु यदि दो या अधिक राज्य यह करार करते हैं कि उन राज्यों के बीच पत्रादि की राजभाषा हिंदी भाषा होगी तो ऐसे पत्रादि के लिए उस भाषा का प्रयोग किया जा सकेगा।

किसी राज्य की जनसंख्या के किसी भाग द्वारा बोली जाने वाली भाषा के संबंध में विशेष उपबंध

347. यदि इस निमित्त मांग किए जाने पर राष्ट्रपति का यह समाधान हो जाता है कि किसी राज्य की जनसंख्या का पर्याप्त भाग यह चाहता है कि उसके द्वारा बोली जाने वाली भाषा को राज्य द्वारा मान्यता दी जाए तो वह निदेश दे सकेगा कि ऐसी भाषा को भी उस राज्य में सर्वत्र या उसके किसी भाग में ऐसे प्रयोजन के लिए, जो वह विनिर्दिष्ट करे, शासकीय मान्यता दी जाए।

उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालयों आदि की भाषा

उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में और अधिनियमों, विधेयकों आदि के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा

348. 1. इस भाग के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी, जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक

(क) उच्चतम न्यायालय और प्रत्येक उच्च न्यायालय में सभी कार्यवाहियां अंग्रेजी भाषा में होंगी,

(ख) (i) संसद के प्रत्येक सदन या किसी राज्य के विधान-मंडल के सदन या प्रत्येक सदन में पुन:स्थापित किए जाने वाले सभी विधेयकों या प्रस्तावित किए जाने वाले उनके

संशोधनों के,

(ii) संसद या किसी राज्य के विधान-मंडल द्वारा पारित सभी अधिनियमों के और राष्ट्रपति या किसी राज्य के राज्यपाल***द्वारा प्रख्यापित सभी अध्यादेशों के, और

(iii) इस संविधान के अधीन अथवा संसद या किसी राज्य के विधान-मंडल द्वारा बनाई गई किसी विधि के अधीन निकाले गए या बनाए गए सभी आदेशों, नियमों, विनियमों और उपविधियों के, प्राधिकृत पाठ अंग्रेजी भाषा में होंगे।

(2) खंड (1) के उपखंड (क) में किसी बात के होते हुए भी, किसी राज्य का राज्यपाल*** राष्ट्रपति की पूर्व सहमति से उस उच्च न्यायालय की कार्यवाहियों में, जिसका मुख्य स्थान उस राज्य में है, हिंदी भाषा का या उस राज्य के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाली किसी अन्य भाषा का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगा,

परंतु इस खंड की कोई बात ऐसे उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय, डिक्री या आदेश को लागू नहीं होगी।

(3) खंड (1) के उपखंड (ख) में किसी बात के होते हुए भी, जहां किसी राज्य के विधान-मंडल ने, उस विधान-मंडल में पुर:स्थापित विधेयकों या उसके द्वारा पारित अधिनियमों में अथवा उस राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशों में अथवा उस उपखण्ड के पैरा (iii) में निर्दिष्ट किसी आदेश, नियम, विनियम या उप-विधि में प्रयोग के लिए अंग्रेजी भाषा से भिन्न कोई भाषा विहित की है वहां उस राज्य के राजपत्र में उस राज्य के राज्यपाल***के प्राधिकार से प्रकाशित अंग्रेजी भाषा में उसका अनुवाद इस अनुच्छेद के अधीन उसका अंग्रेजी भाषा में प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा।

भाषा से संबंधित कुछ विधियां अधिनियमित करने के लिए विशेष प्रक्रिया

349. इस संविधान के प्रारंभ से पन्द्रह वर्ष की अवधि के दौरान, अनुच्छेद 348 के खंड (I) में उल्लिखित किसी प्रयोजन के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा के लिए उपबंध करने वाला कोई विधेयक या संशोधन संसद के किसी सदन में राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी के बिना पुर:स्थापित या प्रस्तावित नहीं किया जाएगा और राष्ट्रपति किसी ऐसे विधेयक को पुर:स्थापित या किसी ऐसे संशोधन को प्रस्तावित किए जाने की मंजूरी अनुच्छेद 344 के खण्ड (1) के अधीन गठित आयोग की सिफारिशों पर और अनुच्छेद के खण्ड (4) के अधीन गठित समिति के प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात ही देगा, अन्यथा नहीं।

विशेष निर्देश

350. व्यथा के निवारण के लिए अभ्यावेदन में प्रयोग की जाने वाली भाषा- प्रत्येक व्यक्ति किसी व्यथा के निवारण के लिए संघ या राज्य के किसी अधिकारी या प्राधिकारी को, यथास्थिति, संघ में या राज्य में प्रयोग होने वाली किसी भाषा में अभ्यावेदन देने का हकदार होगा।

350. क. प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की सुविधाएं- प्रत्येक राज्य और राज्य के भीतर प्रत्येक स्थानीय प्राधिकारी भाषाई अल्पसंख्यक-वर्गों के बालकों को शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की पर्याप्त सुविधाओं की व्यवस्था करने का प्रयास करेगा और राष्ट्रपति किसी राज्य को ऐसे निदेश दे सकेगा जो वह ऐसी सुविधाओं का उपबंध सुनिश्चित कराने के लिए आवश्यक या उचित समझता है।

350. ख. भाषाई अल्पसंख्यक-वर्गों लिए विशेष अधिकारी-(1) भाषाई अल्पसंख्यक-वर्गों के लिए एक विशेष अधिकारी होगा जिसे राष्ट्रपति नियुक्त करेगा।

(2) विशेष अधिकारी का यह कर्तव्य होगा कि वह इस संविधान के अधीन भाषाई अल्पसंख्यक-वर्गों के लिए उपबंधित रक्षोपायों से संबंधित सभी विषयों का अन्वेषण करें और उन विषयों के संबंध में ऐसे अंतरालों पर जो राष्ट्रपति निर्दिष्ट करे, राष्ट्रपति को प्रतिवेदन दे और राष्ट्रपति ऐसे सभी प्रतिवेदनों को संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगा और संबंधित राज्यों की सरकारों को भिजवाएगा।

हिंदी भाषा के विकास के लिए निदेश

351. संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे जिससे वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिन्दुस्तानी में और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहां आवश्यक या वांछनीय हो वहां उसके शब्द-भंडार के लिए मुख्यत: संस्कृत से और गौणत: अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे।

*** या 'राजप्रमुख' शब्द संविधान (सप्तम संशोधन) अधिनियम, 1956, धारा 29 और अनुसूची द्वारा विलुप्त कर दिए गए।



11.12.2018 को प्रमुख मुख्य सुरक्षा आयुक्त श्री राजाराम को राजभाषा रजत पदक और प्रशस्ति पत्र प्रदान करते सदस्य/कार्मिक श्री एस.एन. अग्रवाल



11.12.2018 को राजभाषा में उत्कृष्ट कार्य के लिए पूर्वोत्तर रेलवे को प्रथम पुरस्कार के रूप में रेलवे बोर्ड से प्राप्त रेल मंत्री राजभाषा शील्ड, महाप्रबंधक श्री राजीव अग्रवाल जी को सौंपते हुए मुख्य राजभाषा अधिकारी श्री पी.डी. शर्मा



24.12.2018 को महाप्रबंधक श्री राजीव अग्रवाल से रेलवे बोर्ड व्यक्तिगत नकद पुरस्कार का प्रमाण पत्र प्राप्त करते श्री विपुल चंद्र त्रिपाठी, उपमुभंनिक/विद्युत एवं सिगनल, गोरखपुर



24.12.2018 को आयोजित क्षेत्रीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक को संबोधित करते महाप्रबंधक श्री राजीव अग्रवाल साथ में मुराधि श्री पी.डी. शर्मा



24.12.2018 को महाप्रबंधक श्री राजीव अग्रवाल से रेलवे बोर्ड व्यक्तिगत नकद पुरस्कार का प्रमाण पत्र प्राप्त करते श्री सुदर्शन प्रसाद, निजी सचिव-I/प्रमुयाइं



24.12.2018 को महाप्रबंधक श्री राजीव अग्रवाल से रेलवे बोर्ड व्यक्तिगत नकद पुरस्कार का प्रमाण पत्र प्राप्त करते श्री आनंद कुमार, सकाधि/प्रथम, इज्जतनगर



20.11.2018 को आयोजित अखिल रेल हिंदी नाट्योत्सव में सर्वश्रेष्ठ स्क्रिप्ट लेखन का पुरस्कार प्राप्त करते नाट्य निर्देशक श्री आसिफ जहीर, कार्याधी/यांत्रिक कारखाना, गोरखपुर



24.12.2018 को महाप्रबंधक श्री राजीव अग्रवाल से रेलवे बोर्ड व्यक्तिगत नकद पुरस्कार का प्रमाण पत्र प्राप्त करते श्री संजय कुमार सिंह, स्टेशन अधीक्षक, बलिया/वाराणसी



रघुवीर सहाय

(09.12.1929 - 30.12.1990)

सब जाने-पहचाने चेहरे
जाने कितनी जल्दी में हैं
कतराते हैं मुड़ जाते हैं
नौजवान हँसता है कहकर
ठीक सामने 'तो मेरा क्या'



श्री पुरुषोत्तम दास शर्मा, मुख्य राजभाषा अधिकारी, पूर्वोत्तर रेलवे द्वारा प्रकाशित